BPSC-102

संवैधानिक सरकार और भारत में लोकतंत्र

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर डी. गोपाल (अध्यक्ष)
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068

प्रोफेसर ए.के सिंह
फेडरल अध्ययन केन्द्र
जामिया हमदर्द विश्वविद्यालय
नई–दिल्ली

प्रोफेसर अनुराग जोशी
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068

प्रोफेसर एस. वी. रेड्डी
राजनीति विज्ञान संकाय,
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू,
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली

प्रोफेसर अमित प्रकाश
लॉ एवं गर्वेनस अध्ययन केन्द्र, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई–दिल्ली

प्रोफेसर सार्तिक बाग
राजनीति विज्ञान विभाग, बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर, राय बरेली, रोड़, लखनऊ

प्रोफेसर जगपाल सिंह
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068

पाठ्यक्रम तैयार करने वाली टीम

खण्ड और इकाई	इकाई लेखक
खण्ड 1 संविधान सभा और संविधान	
इकाई 1 संविधान का निर्माण	प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विद्यापीठ, इग्नू
इकाई 2 दार्शनिक पृष्ठभूमि	प्रतिप चटर्जी, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, कल्याणी विश्वविद्यालय, नदिया, पश्चिम बंगाल
इकाई 3 प्रस्तावना	प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू
इकाई 4 मौलिक अधिकार	डा. दिव्या रानी, अकादमिक ऐसोसियेट, राजनीति संकाय, इग्नू
इकाई 5 राज्य के नीति निर्देशक सिंद्धांत	डा. दिव्या रानी, अकादमिक ऐसोसियेट, राजनीति संकाय, इग्नू
इकाई 6 मौलिक कर्तव्य	जयंत देबनाथ, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, मृनालिनी दत्ता, महाविद्यापीठ, कोलकता
खण्ड 2 सरकार के अंग	
इकाई 7 विधायिका	प्रोफेसर प्रलय कानूनगो, राजनीति अध्ययन केन्द्र, जे.एन.यू. नई दिल्ली
इकाई 8 कार्यपालिका	प्रोफेसर विजयशेखर रेड्डी, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 9 न्यायपालिका	प्रोफेसर विजयशेखर रेड्डी, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली
खण्ड 3 संघवाद और विकेन्द्रीकरण	
इकाई 10 शक्तियों का विभाजन	प्रतिप चटर्जी, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, कल्याणी विश्वविद्यालय, नदिया, पश्चिम बंगाल
इकाई 11 आपातकालीन प्रावधान	जयंत देबनाथ, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, मृनालिनी दत्ता, महाविद्यापीठ, कोलकता
इकाई 12 पाँचवी और छठी अनुसूची	डा. नोंगमेंथेम किशोर चंद सिंह, अकादमिक एसोसिएट, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 13 स्थानीय स्व–शासन	डा. विनायक नारायण श्रीवास्तव, पूर्व फेलो, नेहरु स्मारक एवं पुस्तकालय, नई दिल्ली, और डा. गुरूपदा सरन, स्कूल ऑफ कन्टीन्यूइंग एडुकेशन, इग्नू,

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रोफेसर जगपाल सिंह

सामान्य संपादक : प्रोफेसर जगपाल सिंह

अनुवादक : डॉ. गिर्राज प्रसाद बैरवा, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रूफरीडिंग एवं वैटिंग : डॉ. दिव्या रानी अकादमिक असोसिएट, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

सामग्री निर्माण

श्री मंजीत सिंह
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

अप्रैल, 2019

© इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2019

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कृति का कोई भी अंश, मिमियोग्राफ या किसी भी अन्य रूप में, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी अन्य व्यक्ति द्वारा पुनरुत्पादित नहीं किया जा सकता है।

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर टाइप सेटिंग : टेसा मीडिया एण्ड कम्प्यूटर, C-206, A.F.Enclave-II, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम सामग्री (विषय सूची)

			पृष्ठ संख्या
खण्ड	**1**	**संविधान सभा और संविधान**	**5**
इकाई	1	संविधान का निर्माण	7
इकाई	2	दार्शनिक आधार	19
इकाई	3	प्रस्तावना	26
इकाई	4	मौलिक अधिकार	33
इकाई	5	राज्य के नीति नीति निर्देशक सिद्धांत	43
इकाई	6	मौलिक कर्तव्य	51
खण्ड	**2**	**सरकार के अंग**	**61**
इकाई	7	विधायिका	63
इकाई	8	कार्यपालिका	74
इकाई	9	न्यायपालिका	85
खण्ड	**3**	**संघवाद और विकेन्द्रीकरण**	**97**
इकाई	10	शक्तियों का विभाजन	99
इकाई	11	आपातकालीन प्रावधान	108
इकाई	12	पाँचवी एवं छठी अनुसूची	115
इकाई	13	स्थानीय स्व–शासन	127
संदर्भ सूची			**140**

पाठ्यक्रम परिचय

यह पाठ्यक्रम भारत में संविधानिक सरकार और लोकतंत्र के विभिन्न पहलुओं के बारे में आपको जानकारी प्रदान करता है। यह संविधान में उल्लेखित लोकतांत्रिक मूल्यों के बारे में आपको परिचित कराता है तथा नागरिकों के बीच संबंधों, राज्य एवं नागरिकों के बीच संबंधों, राज्य की विभिन्न इकाइयों के बीच संबंधों जैसे केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और स्थानीय सरकार एवं राज्य के विभिन्न अंगों जैसे कार्यपालिका, विधायिका, तथा न्यायपालिका के बीच संबंधों के बारे में जानकारी प्रदान करता है। जैसा कि आप इस पाठ्यक्रम की विभिन्न इकाइयों में पढेंगे, भारत का संविधान लोगों को शासन प्रदान करता है। जिसमें उनके अधिकार, उनका सम्मान तथा संप्रभुता सुरक्षित रहती हैं। संविधान के प्रावधान सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषायी बहुलवाद की भी रक्षा करते हैं। इसमें कुछ आपातकालीन प्रावधान भी दिए गए हैं जो कि लोगों के अधिकारों पर प्रतिबंध लगाता है। ये प्रावधान विभिन्न प्रकार की आपातकालीन स्थितियों के प्रावधान है।

इस पाठ्यक्रम में 13 इकाइयों की चर्चा की गयी है। सार के आधार पर ये इकाइयाँ तीन खण्डों (ब्लाक्स) में विभाजित है। खण्ड एक संविधान सभा और संविधान के बारे में है। खण्ड दो सरकार के अंगों से संबंधित है। और खण्ड तीन संघवाद और विकेन्द्रीयकरण की चर्चा करता है। इन इकाइयों एवं खण्ड का परिचय प्रत्येक खण्ड के शुरू में दिया गया है।

प्रत्येक इकाई में अभ्यास प्रश्न भी दिए गए हैं। प्रत्येक इकाई को पढ़ने के बाद आप इन प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास कर सकते हैं। इकाई के अंत में आप इन अभ्यास प्रश्नों के उत्तर भी देख सकते हैं। आप अपने उत्तर की जाँच इकाई में दिये गये उत्तर के साथ कर सकते हैं। लेकिन आप अपने शब्दों में उत्तर देने के लिए सावधानी बरतें।

पाठ्यक्रम के अंत में कुछ महत्वपूर्ण संदर्भ सूची भी दी गयी है। आपको सलाह दी जाती है कि आप इसका इस्तेमाल करें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खण्ड 2
सरकार के अंग

खण्ड 2 सरकार के अंग

कानून बनाना, कानूनों को लागू करवाना तथा कानूनों की व्याख्या करना, उनका क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन करना सरकार के महत्वपूर्ण कार्य है। आधुनिक प्रजातांत्रिक देशों में, ये कार्य विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका द्वारा किये जाते है। ये कार्य नियंत्रण एवं संतुलन के आधार पर किये जाते है। किसी राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति इन संस्थाओं के कार्य एवं उनके बीच संबंधों पर निर्भर है। सरकार के तीनों अंगों के बीच शासन के बंटवारे को शक्तियों का विभाजन कहा जाता है। यह खण्ड संस्थागत ढ़ांचे से संबंधित है जिसमें भारतीय राजनीतिक व्यवस्था कार्य करती है। इसमें सरकार के तीनों अंग विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका पर चर्चा की गयी है। अन्य शब्दों में, यह खण्ड शक्तियों के विभाजन के बारे में है। तीनों अंगो का अलग लक्षण एवं अलग–अलग भूमिका है भारतीय संविधान के अंतर्गत। इकाई 7 विधायिका की चर्चा करती है, इकाई 8, कार्यपालिका से संबंधित है तथा इकाई 9, भारत की संपूर्ण न्यायिक व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य को प्रदान करती है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 विधायिका*

संरचना

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 संघीय विधायिका

7.2.1 राष्ट्रपति

7.2.2 लोक सभा

7.2.3 राज्य सभा

7.2.4 राज्य सभा की विशेष शक्तियाँ

7.3 पीठासीन अधिकारी

7.3.1 लोक सभा अध्यक्ष

7.3.2 राज्य सभा का सभापति

7.4 विधायिका प्रक्रिया

7.4.1 धन विधेयक

7.5 संसदीय विशेषाधिकार

7.6 कार्यपालिका पर नियंत्रण के संसदीय उपाय

7.6.1 संसदीय विधायिका

7.7 राज्य विधायिका

7.8 सारांश

7.9 उपयोगी संदर्भ

7.10 अभ्यास के प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य भारतीय संसद की उत्पत्ति, उसका ढाँचा एवं उसकी कार्य प्रणाली का परीक्षण करना है। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप निम्न निष्कर्ष पर पहुँचेंगे :

- भारत में आधुनिक विधायिका की उत्पत्ति का पता लगाना।
- संसद का ढ़ाँचा एवं उसकी कार्यप्रणाली की चर्चा करना।
- संसदीय प्रक्रियाओं की व्याख्या करना।

7.1 प्रस्तावना

लेजिसलेचर (विधायिका) शब्द की उत्पत्ति लॉटिन भाषा के शब्द लेक्स से हुई है। जिसका अर्थ है विशेष प्रकार का विधि नियम। इस नियम का अर्थ है विधान और जो संस्था इसे लागू करती है उसे विधायिका कहते है। प्रधानतः विधायिका के दो रूप है। एक है संसदीय

*प्रोफेसर प्रलय कानूनगो, राजनीति अध्ययन केन्द्र, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, जे.एन.यू. नई दिल्ली; बी. पी.एस.ई.–212, इकाई 10, से अनुकूलित है।

और दूसरा है अध्यक्षीय। संसदीय प्रतिमान में कार्यपालिका का चुनाव अपने सदस्यों के मध्य से विधायिका द्वारा किया जाता है। अतः कार्यपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी है। जबकि अध्यक्षीय व्यवस्था शक्तियों के विभाजन पर आधारित होती है । इस व्यवस्था के अंतर्गत कोई भी व्यक्ति एक साथ कार्यपालिका एवं विधायिका दोनों में कार्य नहीं कर सकता।

भारत में विधायिका दो स्तर पर कार्य करती है। पहला संघीय स्तर पर और दूसरा राज्य स्तर पर। संघीय स्तर पर इसे भारतीय संसद कहा जाता है। यह इकाई मुख्य रूप से भारतीय संसद से संबंधित है। इस इकाई के अंतर्गत 7.7 अनुभाग में आप राज्य विधायिका के बारे में भी पढ़ेंगे। भारतीय संसद जो कि संविधान द्वारा रचित है, एक सर्वोच्च प्रतिनिधित्व सत्ता है। यह एक सर्वोच्च विधायी अंग है और जनता की राय को व्यक्त करने का राष्ट्रीय मंच है।

7.2 संघीय विधायिका

संविधान के अनुच्छेद 79 के अंतर्गत भारतीय संसद का गठन किया गया है। भारतीय संसद के अंतर्गत राष्ट्रपति और संसद के दो सदन सम्मिलित है। पहला सदन लोक सभा है जिसे निम्न सदन भी कहा जाता है जबकि दूसरा सदन राज्य सभा है जिसे उच्च सदन कहा जाता है। लोक सभा अस्थायी सदन हैं, जिसे कभी भी भंग किया जा सकता है जबकि राज्य सभा एक स्थायी सदन है जिसे कभी भंग नहीं किया जा सकता है। राष्ट्रपति का पद भी कभी रिक्त नहीं रहता है।

7.2.1 राष्ट्रपति

अमेरिका के राष्ट्रपति विधायिका (काँग्रेस) का हिस्सा नहीं है जबकि भारत के राष्ट्रपति भारतीय संसद के अभिन्न अंग है। यद्यपि वे संसद के किसी भी सदन में बैठ नहीं सकते एवं सदन की कार्यवाही में भी हिस्सा नहीं ले सकते। भारत के राष्ट्रपति संसद से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। राष्ट्रपति सदन को चलाने का निर्देश दे सकते है एवं उन्हें लोक सभा को भंग करने की शक्ति भी प्राप्त है। राष्ट्रपति की अनुमति के बिना कोई भी विधेयक कानून नहीं बन सकता चाहे वह विधेयक सदन के दोनों सदनों द्वारा ही पारित क्यों न हो गया हो। यदि दोनों सदन की बैठक नहीं हो तब भी राष्ट्रपति अपनी शक्तियों के द्वारा कानूनों को लागू कर सकता है। हांलाकि ये अध्यादेश अस्थायी होते है फिर भी ये अध्यादेश संसद द्वारा पारित अध्यादेशों के समान ही शक्तिशाली होते है। हम आगे इकाई आठ में भारत के राष्ट्रपति की शक्तियों का विस्तृत विवेचन करेंगे।

7.2.2 लोक सभा

लोक सभा संसद का निम्न सदन है। यह जनता का सदन भी कहा जाता है। जनता प्रत्यक्ष रूप से लोक सभा के सदस्यों का चुनाव करती है। लोक सभा के सदस्यों की अधिकतम संख्या अभी 545 है। इसमें 530 सदस्य राज्यों से चुनकर आते हैं जबकि 20 सदस्य केन्द्र शासित प्रदेशों से चुनकर आते हैं। 2 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किये जाते हैं। सदस्य आंग्ल भारतीय समुदाय से आते हैं। इन्हें राष्ट्रपति द्वारा इसलिये मनोनीत किये जाते हैं ताकि इनका प्रतिनिधित्व भी लोक सभा में हो सके।

सीटों का बंटवारा क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व के सिद्धांत पर आधारित होता है। अर्थात् सभी राज्यों को उनकी जनसंख्या के आधार पर सीटें निधार्रित की जाती है। चुनाव के हिसाब से सभी राज्यों को निर्वाचन क्षेत्र में बांटा जाता है जिसकी जनसंख्या ज्यादातर समान होती है।

लोक सभा के सदस्य वयस्क मताधिकार के आधार पर चुने जाते है अर्थात् जो भी वयस्क जिसकी आयु 18 वर्ष है वह वोट देने के लिए योग्य है। जो भी प्रत्याशी सबसे अधिक वोट प्राप्त करता है वह निर्वाचित होता है। साधारणतया लोक सभा का कार्यकाल पांच वर्ष का होता है लेकिन यह समय पूर्व भी राष्ट्रपति के द्वारा भंग की जा सकती है।

लोक सभा का सदस्य होने के लिये किसी भी व्यक्ति को भारत का नागरिक होना चाहिये तथा उसकी उम्र 25 वर्ष हो। वह व्यक्ति कानून द्वारा निर्धारित अन्य योग्यताऐं भी पूरी करता हो। कोई भी प्रत्याशी भारत के किसी भी राज्य के निर्वाचन क्षेत्र से चुनाव लड़ सकता है। संविधान में संसद के सदस्य होने के लिए कुछ अनिवार्य शर्त निर्धारित है तथा सदस्य को अयोग्य घोषित करने की भी शर्तें हैं कोई भी व्यक्ति संसद के दोनों सदनों का एक साथ सदस्य नहीं हो सकता है। कोई भी व्यक्ति एक से अधिक सीटों पर चुनाव लड़ सकता है। लेकिन वह किसी एक सीट का ही अपने पास रख सकता है यदि वह एक से अधिक सीटों पर चुनाव जीत कर आता है। वह सीट अपनी इच्छानुसार रख सकता है।

यदि कोई व्यक्ति राज्य विधानसभा और संसद दोनों का सदस्य चुना जाता है और वह निर्धारित समय पर राज्य विधान सभा से इस्तीफा नहीं देता है, ऐसी स्थिति में वह अपनी संसद की सदस्यता गंवा बैठेगा। कोई भी व्यक्ति लाभ के पद पर ना हो तथा उसे किसी न्यायालय द्वारा पागल या अस्वस्थ घोषित नहीं किया गया हो। कोई भी सदस्य यदि संसद के सत्र से 60 दिन से अधिक अनुपस्थित रहता है तो उसे अयोग्य घोषित किया जा सकता है। यदि कोई सदस्य किसी अन्य दूसरे देश की नागरिकता ग्रहण कर लेता है तब भी वह अयोग्य माना जायेगा।

7.2.3 राज्य सभा

संविधान के अनुसार राज्य सभा एक उच्च सदन है। यह राज्यों का प्रतिनिधित्व करती है। राज्य सभा के कुल सदस्यों की संख्या 250 है जिसमें 12 सदस्यों को राष्ट्रपति मनोनीत करता है। ये 12 सदस्य साहित्य कला, विज्ञान एवं समाज सेवा में अनुभव प्राप्त व्यक्ति होते है। बाकि के सदस्य राज्यों की विधानसभा द्वारा चुनकर भेजे जाते है। इनका चुनाव राज्य की जनसंख्या के आधार पर किया जाता है। लोक सभा के विपरीत राज्य सभा के सदस्यों का चुनाव अप्रत्यक्ष तरीके से होता है। राज्य सभा में प्रतिनिधित्व एक समान नहीं है। यह पूरी तरह से राज्य की जनसंख्या पर निर्भर है। अर्थात् जिस राज्य की जनसंख्या अधिक है उस राज्य का प्रतिनिधित्व अन्य छोटे राज्यों की तुलना में अधिक होता है। राज्य सभा के सदस्यों की संख्या एक से लेकर अधिकतम 34 है। यह राज्यवार जनसंख्या पर निर्भर है। नागालैण्ड से जहां सिर्फ एक ही सदस्य है वहीं उत्तर प्रदेश से 34 सदस्य है। क्योंकि दोनों राज्यों की जनसंख्या में काफी अंतर है। राज्य सभा का चरित्र एक प्रकार से संघवाद का प्रतीक है।

राज्य सभा एक स्थायी सदन है। इसे कभी भंग नहीं किया जा सकता है। इसके एक तिहाई सदस्य दो वर्ष के बाद अवकाश ग्रहण करते है। खाली पदों पर तुरंत चुनाव करवाये जाते है। राज्य सभा के सदस्य का कार्यकाल 6 वर्ष का होता है। लेकिन वह समय पूर्व भी अपने पद से इस्तीफा दे सकता है। या उसे किसी कारणवश अयोग्य भी घोषित किया जा सकता है।

7.2.4 राज्य सभा की विशेष शक्तियाँ

लोक सभा के अधिकार क्षेत्र में आने वाले सभी मामलों की सूचना प्राप्त करने का राज्य सभा को अधिकार है। लेकिन राज्य सभा को मंत्रीपरिषद के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव पर

वोट देने का अधिकार नहीं है। धन विधेयक जैसे मामलों में भी राज्य सभा को अधिक शक्ति नहीं है। फिर भी संविधान ने राज्य सभा को कुछ विशेष शक्तियाँ प्रदान की है। राज्यों का प्रमुख प्रतिनिधित्व होने के कारण, राज्य सभा को दो प्रमुख शक्तियाँ प्राप्त है। अनुच्छेद 249 के अंतर्गत राज्य सभा कोई भी प्रस्ताव पारित कर सकती है। संसद किसी भी महत्वपूर्ण मुद्दे पर कानून बना सकती है राज्य सभा राज्य सूची के विषयों पर कानून बनाने का अधिकार रखती है। राज्य सभा की दूसरी शक्ति है अखिल भारतीय सेवाओं की स्थापना करना। इस प्रकार राज्य सभा भारतीय विधायिका का महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह उसी तरह से है जिस तरह इंग्लैण्ड में लॉर्ड सभा है। यह एक महत्वपूर्ण सदन है जिसके सभी सदस्य सम्माननीय होते है।

7.3 पीठासीन अधिकारी

दोनों सदनों के अपने पीठासीन अधिकारी होते है। लोकसभा का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष इसके पीठासीन अधिकारी होते है जबकि राज्य सभा का भी अध्यक्ष और उपाध्यक्ष होता है।

7.3.1 लोक सभा अध्यक्ष

लोकसभा अध्यक्ष की स्थिति इंग्लैण्ड के कॉमन सभा के अध्यक्ष की तरह है। लोक सभा अध् यक्ष का कार्यलय बहुत सम्मानजनक और उच्च कोटी का होता है। एक बार अध्यक्ष चुने जाने के पश्चात् लोक सभा अध्यक्ष का अपनी पार्टी से कोई भी संबंध नहीं होता है। वह निष्पक्ष होकर अपनी जिम्मेदारी निभाता है। वह सदन की कार्यवाही को सुचारू रूप से चलाता है। वह सदन की गरिमा बनाये रखता है उन्हें सदन में शांति एवं व्यवस्था बनाये रखने की भी जिम्मेदारी होती है। लोक सभा अध्यक्ष ही धन विधेयक को प्रमाणित करता है। लोक सभा अध्यक्ष ही सदन में प्रश्न पूछने, प्रस्ताव लाने की अनुमति प्रदान करता है। लोक सभा अध्यक्ष ही विभिन्न समितियों का गठन करता है। जब लोक सभा भंग होती है तब भी अध्यक्ष का पद बना रहता है। लोक सभा अध्यक्ष के कार्य को कोई चुनौती नहीं दे सकता है। उसका वेतन और भत्ते संसद की निधि से तय किया जाता है।

लोक सभा अध्यक्ष अपने पद पर जब तक रहता है तब तक कि नयी संसद का गठन नहीं हो जाता है। लोक सभा अध्यक्ष की अनुपस्थिति में उपाध्यक्ष लोक सभा की अध्यक्षता करता है।

7.3.2 राज्यसभा का सभापति

भारत का उप–राष्ट्रपति राज्य सभा का सभापति होता है। लेकिन उस समय जब उप राष्ट्रपति, राष्ट्रपति का कार्यभार संभालता है या राष्ट्रपति के कार्य करता है, वह राज्य सभा के सभापति का दायित्व नहीं निभा सकता। उप राष्ट्रपति का चुनाव संसद के दोनों सदनों के सदस्य मिलकर करते हैं। यह गुप्त मतदान द्वारा सिंगल ट्रांसफेयेरेबल मत प्रणाली द्वारा अनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किया जाता है। उप राष्ट्रपति संसद या राज्य विधान सभा के किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता है। उप राष्ट्रपति का कार्यकाल पांच वर्ष का होता है। उसका कार्यकाल उसके पद ग्रहण करने के दिन से माना जाता है। वे इच्छा से अपने पद से इस्तीफा देकर पद मुक्त हो सकते है। या फिर उन्हें राज्य सभा के सदस्यों द्वारा बहुमत से एक प्रस्ताव पास करके पद से हटाया जा सकता है जिसमें लोक सभा की स्वीकृति भी जरूरी है। राज्य सभा सभापति के कार्य एवं शक्तियाँ लोक सभा अध्यक्ष के समान होती है।

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) भारतीय संसद के सदस्य की योग्यताऐं एवं अयोग्ताऐं कौन–कौनसी हैं?

....

....

....

....

....

2) लोक सभा के अध्यक्ष की शक्तियाँ क्या हैं?

....

....

....

....

....

7.4 विधायी प्रक्रिया

विधायिका का प्रमुख कार्य कानून बनाना है। संविधान के अनुसार विधायी प्रक्रिया के स्तर निम्न है।

पहला स्तर किसी विधेयक को प्रस्तुत करना है। यह प्रमुख कानून को इंगित करता है जिसे सदन में प्रस्तुत किया जाता है। किसी भी बिल को प्रस्तुत करने का आशय है उस बिल को पढ़ा जाना। दो प्रकार के विधेयक होते हैं। एक साधारण विधेयक दूसरा धन विधेयक। धन विधेयक या वित विधेयक के अतिरिक्त कोई दूसरा विधेयक संसद के किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है। इसे दोनों द्वारा पारित किया जाना जरूरी है तभी जाकर यह राष्ट्रपति के पास मंजूरी के लिये भेजा जा सकता है। कोई भी विधेयक या तो किसी मंत्री द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है या फिर अन्य सदस्य द्वारा। सदन में प्रस्तुत सभी विधेयकों को गजट राजपत्र में प्रकाशित किया जाना आवश्यक है। साधारणतया, किसी भी विधेयक को प्रस्तुत करते वक्त कोई बहस नहीं होती। जो सदस्य विधेयक को प्रस्तुत करता है वह संक्षेप में इस विधेयक के बारे में जानकारी देता है। यदि विधेयक का इस स्तर पर विरोध होता है तो विरोध करने वाले सदस्य को विरोध के कारण बताने की अनुमति दी जाती है। इसके पश्चात् इसके ऊपर मतदान होता है। यदि सदन इसके पक्ष में मत देता है तब जाकर इसे सदन में प्रस्तुत किया जाता है तत्पश्चात् यह विधेयक अगले स्तर पर जाता है।

दूसरे स्तर पर इसके चार विकल्प होते है। प्रथम, इसके प्रस्तुत होने के बाद इसे मान लिया जाता है। दूसरा इसे सदन की चयन समिति के पास भेजा जा सकता है। तीसरा इसे दोनों सदनों की संयुक्त समिति को भेजा जा सकता है। और चौथा, इसे जनता की राय के लिये जनता के बीच बाँटा जा सकता है। इनमें से प्रथम तीन विकल्पों को सामान्यता अपना

लिया जाता है। अंतिम विकल्प तभी माना जाता है जब इस विधेयक के खिलाफ जन आंदोलन हो या भारी विवाद हो।

प्रथम दिन विधेयक के प्रावधानों पर चर्चा की जाती है। यदि विधेयक को अपनाया है तब उसमें संशोधनों पर विचार किया जाता है और फिर उसके प्रावधानों को अपना लिया जाता है। यदि विधेयक को सदन की चयन समिति के पास भेजा जाता है तब उस पर चर्चा होने के पश्चात् इसकी रिपोर्ट सदन को प्रस्तुत की जाती है।

इसके बाद उस विधेयक में संशोधन स्वीकार किये जाते है। इसमें काफी समय खर्च होता है। इस प्रकार विधेयक पूरी तरह से तैयार हो जाता है और उसकी सभी प्रक्रिया पूरी हो जाती है। तीसरे स्तर पर विधेयक के प्रभारी विधेयक को पारित करने के लिये आगे बढ़ाता है इस स्तर पर विधेयक पर संक्षिप्त चर्चा की जाती है तथा इसमें कुछ औपचारिक संशोधन स्वीकार किये जाते है। जब सारे संशोधन बंद हो जाते है, तब विधेयक उस सदन में पारित होता है जिसमें इसे प्रस्तुत किया जाता है। उसके बाद इस विधेयक को दूसरे सदन में भेजा जाता है।

जब यह विधेयक दूसरे सदन के पास जाता है तो इसे फिर से वही प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है जो यह पहले सदन में अपनाई गई थी। इस सदन के पास तीन विकल्प होते है। पहला, इस विधेयक को ज्यों की त्यों पारित कर दिया जाय। दूसरा, इस विधेयक को पूरी तरह से खारिज कर देना या फिर इसमें संशोधन करने वापस मूल सदन के पास भेज देना। और तीसरा, इस विधेयक के ऊपर कोई भी कार्यवाही न करना। यदि छः महीने के अंदर इस पर कोई निर्णय नहीं लिया गया तो विधेयक निरस्त माना जायेगा।

मूल सदन जिसमें यह विधेयक लाया गया था वह इस विधेयक को कुछ संशोधनों के साथ स्वीकार कर लेता है। यदि यह सदन संशोधनों को स्वीकार करता है तो वह दूसरे सदन को इसकी जानकारी देता है यदि यह सदन संशोधनों को स्वीकार नहीं करता है तो भी इसकी सूचना दूसरे सदन को दी जाती है और इस विधेयक को वापस भेज दिया जाता है। यदि दोनों सदन किसी सहमति पर नहीं पहुँचते है तो राष्ट्रपति दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाता है। फिर इस संयुक्त बैठक में सभी विवादित प्रावधानों को साधारण बहुमत द्वारा पारित किया जाता है या खारिज किया जाता है। यह प्रक्रिया सदन में मौजूद सदस्यों के मत द्वारा पूरी की जाती है।

अंत में जब विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित कर दिया जाता है तो इसे लोकसभा अध्यक्ष के हस्ताक्षर के साथ राष्ट्रपति की अनुमति के लिये प्रस्तुत किया जाता है। यह सामान्यता इस विधेयक का आखिरी स्तर होता है।

यदि राष्ट्रपति विधेयक को मंजूरी दे दे तो फिर यह विधेयक एक कानून बन जाता है और इसे एक दस्तावेज में रख दिया जाता है । यदि राष्ट्रपति विधेयक को मंजूरी देने से मना कर दे फिर यह विधेयक समाप्त हो जाता है। राष्ट्रपति इस विधेयक को सदन के पास पुनर्विचार के लिये भेज सकता है। यदि दोनों सदन फिर से इस विधेयक को संशोधन या बिना संशोधन के पारित कर दे और वापस राष्ट्रपति के पास मंजूरी के लिये भेज दे तो राष्ट्रपति को इसे मंजूर करना पड़ेगा। राष्ट्रपति के पास इसे नामंजूर करने की शक्ति नहीं है।

इस प्रकार कानून निर्माण एक लंबी एवं जटिल प्रक्रिया है। इसमें काफी समय भी लगता है। कम समय में किसी विधेयक को पारित करना कठिन कार्य है। यदि विधेयक को सही

प्रकार से तैयार किया गया हो और विपक्ष का पूरा समर्थन हो तभी कार्य आसानी से किया जा सकता है।

7.4.1 धन विधेयक

वित्त विधेयक वह है जिसका संबंध राजस्व एवं व्यय से है। लेकिन धन विधेयक वित्त विधेयक नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 110 में यह कहा गया है कि कोई भी विधेयक तब तक धन विधेयक नहीं माना जा सकता जब तक कि इसे लोक सभा अध्यक्ष प्रमाणित न कर दे। धन विधेयक राज्य सभा में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। एक बार धन विधेयक लोक सभा द्वारा पारित कर दिया जाय तो फिर इसे राज्य सभा के पास भेजा जाता है। राज्य सभा धन विधेयक को खारिज नहीं कर सकती। राज्य सभा को चौदह दिनों के अंदर ही धन विधेयक को वापस लोक सभा को भेजना पड़ता है। लोक सभा राज्य सभा द्वारा दिये गये संशोधनों एवं सिफारिशों को मानने को बाध्य नहीं है। यदि लोक सभा एक किसी भी सिफारिश को स्वीकार करती है तो इसका आशय धन विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित माना जायेगा। यदि लोक सभा किसी भी संशोधनों या सिफारिश को ना माने तब भी यह विधेयक दोनों सदनों द्वारा बिना किसी संशोधन के पारित माना जायेगा। यदि धन विधेयक लोक सभा द्वारा पारित होकर राज्य सभा के पास भेजा जाता है और राज्य सभा इसे 14 दिनों में वापस न भेजें तो यह विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित मान लिया जाता है।

7.5 संसदीय विशेषाधिकार

संसदीय विशेष लाभ या विशेषाधिकार कुछ ऐसे अधिकार हैं जो संसद के सदस्यों को प्राप्त है। ये अधिकार संसद के सदस्यों को कुशलता पूर्वक कार्य करने की गांरटी देता है। संसद के सदस्यों को दो प्रकार के विशेषाधिकार प्राप्त हैं। प्रगणित एवं अप्रगणित अधिकार। प्रगणित अधिकार इस प्रकार है :–

1) संसद के दोनों सदनों में सदस्यों को बोलने की आजादी
2) संसद में या उसकी किसी समिति में किसी सदस्य द्वारा कही गई किसी बात या किये गये किसी मत के संबंध में संसंद सदस्य के विरूद्व किसी अदालत में कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती।
3) किसी सदन के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन किसी रिपोर्ट, पत्र, मतों या कार्यवाहियों के प्रकाशन के संबंध में भी इस प्रकार कोई उत्तरदायी नहीं होगा।
4) किसी भी दीवानी मामलों में गिरफ्तार होने से छूट मिलती है। यदि सत्र चल रहा है तो उसके 40 दिन पहले एवं 40 दिन बाद तक गिरफ्तारी पर रोक होती है।
5) किसी भी कोर्ट में गवाह के रूप में छूट मिलती है।

अप्रगणित अधिकार वह है जिसमें कोई भी सदस्य यदि संसद की अवमानना करता है तो संसद को यह शक्ति है कि उसके विरूद्व कड़ी कार्यवाही करे।

7.6 कार्यपालिका पर नियंत्रण के संसदीय उपाय

संसद का एक महत्पवूर्ण कार्य कार्यपालिका पर नियंत्रण है। इसके लिये कई प्रकार के उपाय मौजूद है। संसद की कार्यवाही के कुछ महत्वपूर्ण नियम है। पीठासीन अधिकारी प्रश्नकाल का निर्देश देते है। प्रश्न पूछना किसी भी सदस्य का संसदीय अधिकार होता है

चाहे वह किसी भी पार्टी का हो। प्रश्न पूछने के पीछे किसी भी सदस्य का उद्देश्य प्रशासन की कमियों को बताना है तथा सरकार को सही नीति अपनाने को मजबूर करना। यदि नीति पहले से ही बनी हो तो उसमें उचित संशोधन करना।

यदि किसी सदस्य अपने प्रश्नों के उत्तर से संतुष्ट नहीं होता है तो वह पीठासीन अधिकारी को जनता के हित अपना प्रश्न मानकर उस पर चर्चा की माँग कर सकता है। पीठासीन अधिकारी बैठक के अंत के आधे घंटे पहले चर्चा की अनुमति दे सकता है।

पीठासीन अधिकारी की अनुमति से सदस्य मंत्री से किसी महत्वपूर्ण मुद्दे पर जवाब मांग सकते है। मंत्री या तो उस मुद्दे पर अपना संक्षिप्त वक्तव्य दे सकते है या फिर इसके लिये कुछ समय मांग सकते है।

स्थगन प्रस्ताव किसी महत्वपूर्ण मसले की ओर इशारा करता है जो कि देश के लिये काफी गंभीर है। यह स्थगन प्रस्ताव इसलिये लाया जाता है ताकि किसी महत्वपूर्ण मसले पर चर्चा की जा सके और सामान्य मसले की चर्चा से अलग रख सके। स्थगन प्रस्ताव को पारित करने का आशय है सरकार की निन्दा करना। इस उपायों के अतिरिक्त संसद अन्य समितियों के माध्यम से कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है। आप इन समितियों के बारे में आगे उप इकाई में अध्ययन करेंगे।

7.6.1 संसदीय समितियाँ

संसदीय शासन प्रणाली में संसद को कार्यपालिका या मंत्रियों के उत्तरदायित्व तथा प्रशासनिक जवाबदेही को सुनिश्चित करना होता है। कार्यपालिका की जवाबदेही को सुनिश्चित करने के उनके माध्यम है जैसे संसदीय समितियाँ। संसद के द्वारा कई समितियों का गठन किया गया है। ये समितियाँ सरकार के कार्यों की जाँच–पड़ताल करने का अधिकार रखती है। उन महत्वपूर्ण समितियों में दो सबसे खास समितियाँ है जो सरकार के काम–काज की समीक्षा करती है। ये समितियां वित्तीय क्षेत्र से संबंधित है। प्रथम, लोक लेखा समिति, तथा दूसरी आकलन समिति । इन दो समितियों के साथ–साथ अन्य समितियों द्वारा कार्यपालिका पर नजर रखी जाती है। ये समितियां सभी नीतियों का परीक्षण करती है ताकि इन्हें प्रभावशील तरीके से लागू किया जा सके। प्रायः ये समितियां सभी विवादित मसले एवं संवेदनशील मुद्दों पर चर्चा करती है। ये समितियां सभी मंत्रियों एवं पीठासीन अधिकारियों के लिये प्रीरीक्षण का कार्य भी करती है।

7.7 राज्य विधायिका

राज्य विधायिका, राज्यपाल और विधान सभा से मिलकर बनी है। कई राज्यों में राज्यों की विधायिका भारतीय संसद के अनुरूप है। हालांकि सभी राज्यों में दोनों सदन नहीं है। विधान सभा और विधान परिषद। जिन राज्यों में दोनों सदन होते है उन्हें द्विसदनात्मक कहते है। जिन राज्यों में केवल एक सदन, विधान सभा है उन्हें एक सदनात्मक कहते है। यह राज्यों की अपनी इच्छा है कि वो कौनसा सदन चाहते हैं। यह राज्यों के आकलन पर निर्भर है कि वो दोनों सदन चाहते है या एक सदन (विधान सभा) दो सदन ना होने के पीछे प्रमुख कारण वित्त है। कुछ राज्य धन की कमी के कारण दो सदनों का खर्चा उठाने में दिक्कत महसूस करते हैं। ये राज्य एक सदन वाली विधान सभा को ही प्राथमिकता देते है। कुछ राज्यों ने ही दो सदन अपनाया है इनमें 29 राज्यों में नौ राज्यों में ही दो सदन है। विधान सभा और विधान परिषद। 2019 तक आंध्र प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, महाराष्ट्र

तेलगांना, और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों के अंदर ही दूसरा सदन विधान परिषद मौजूद है। 2019 में जम्मू और कश्मीर को दो केन्द्र शासित प्रदेश में विभाजित किया गया है : जम्मू और कश्मीर और लद्दाख। जिसमें जम्मू और कश्मीर में विधान सभा है और लद्दाख में नहीं।

राज्य विधान सभा के सदस्यों का चुनाव भी प्रत्यक्ष रूप से वयस्क मताधिकार के आधार पर होता है। विधान सभा का आधार 60 से लेकर 500 सदस्य तक होता है। यह जनसंख्या के आधार पर होता है। विधान सभा का कार्यकाल भी पांच वर्ष का होता है।

विधान परिषद के सदस्यों की संख्या कम से कम 40 होनी चाहिये लेकिन यह विधान सभा सदस्यों से एक तिहाई से अधिक नहीं होनी चाहिये। विधान परिषद के सदस्य कुछ चुने जाते हैं जबकि कुछ मनोनीत किये जाते है। इनमें से कुल सदस्यों का छठा भाग राज्यपाल द्वारा मनोनीत किये जाते हैं, जबकि बाकी सदस्य विधान सभा द्वारा एक नियम के तहत् अप्रत्यक्ष रूप से चुने जाते है। विधान परिषद की स्थिति विधान सभा की तुलना में बहुत कमजोर है। इसकी स्थिति के कमजोर होने के कुछ कारण हैं जैसे (1) इसके सदस्यों की स्थिति कमजोर होती है क्योंकि इसके सदस्य या तो चुने हुए होते है या फिर मनोनीत होते है। (2) इसकी जीवंतता विधान सभा की इच्छा पर निर्भर है। क्योंकि विधान सभा को यह अधिकार दिया गया है वह किसी भी वक्त एक प्रस्ताव लाकर इस सदन को निरस्त कर सकती है। (3) मंत्रिपरिषद विधान सभा के प्रति उत्तरदायी होती है ना कि विधान परिषद के, (4) जहाँ तक विधेयकों का सवाल है, विधान परिषद की स्थिति विधेयकों को पास करने में बहुत कमजोर है। यह केवल किसी विधेयक को एक निश्चित समय तक रोके रख सकती है। इस प्रकार विधान परिषद की स्थिति विधान सभा के मुकाबले काफी कमजोर है।

जहाँ तक विधायी प्रक्रिया का सवाल है यह प्रक्रिया राज्य विधान सभा एवं संसद दोनों के समान होती है। राज्यपाल किसी भी विधेयक को जो राज्य विधान सभा में पारित हो चुका हो उसे अपने पास रख सकता है। राज्यपाल की अनुमति के बिना कोई भी विधेयक कानून नहीं बन सकता, भले ही उसे दोनों सदन पारित कर दें। यदि राज्यपाल किसी विधेयक को संदेश के साथ विधानमंडल को लौटा देता है तो उस पर तदनुसार विचार किया जायेगा और उसे पुनः संशोधनों सहित पारित करने की अनुमति दे दी जायेगी। लेकिन राष्ट्रपति अपनी अनुमति देने को बाध्य नहीं है। इस प्रकार कोई भी विधेयक राज्यपाल राष्ट्रपति के लिए आरक्षित रखता है और राष्ट्रपति ही इसे अध्यादेश के रूप में ला सकता है। राज्यपाल की इसमें और कोई भूमिका नहीं होती। संविधान में इसके लिए कोई समय सीमा तय नहीं की है इसलिए राष्ट्रपति किसी भी अध्यादेश को लंबे समय तक अपने पास रख सकता है या फिर उस पर अपनी अनुमति प्रदान कर सकता है। राष्ट्रपति बिना कारण बताये किसी भी विधेयक को अपने पास रख सकता है या ठंडे बस्ते में रख सकता है।

अभ्यास के प्रश्न 2

नोट: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) प्रश्नकाल क्या है?

....

....

....

2) स्थगन प्रस्ताव के महत्व को समझाइये।

....

....

....

....

7.8 सारांश

भारतीय संसद हमारे देश की सर्वोच्च कानून बनाने वाली संस्था है। इसका लंबा ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य है। हमारी संसद, राष्ट्रपति, लोक सभा एवं राज्य सभा से मिलकर बनी है। संसद में निर्वाचित होने के लिए किसी भी सदस्य को कुछ शर्ते एवं योग्यताओं को पूरा करना जरूरी है जो कि संविधान एवं संसद द्वारा निर्धारित की गयी है। संसद के सदस्यों को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त है ताकि वे अच्छे से कार्य कर सके। प्रत्येक सदन का अपना पीठासीन अधिकारी होता है जो सदन की बैठकों को संचालित करता है और सदन की गरिमा को भी बनाये रखता है।

संसद का प्रमुख कार्य कानून बनाना है तथा मंत्री परिषद को उत्तरदायी बनाना है ताकि नीतियों को लागू कर सके । इसके अलावा संसद मंत्रीपरिषद की आलोचना भी कर सकती है जब उसे लगे कि कार्य ठीक प्रकार से नहीं हो रहा है। संसद को संविधान में संशोधन की शक्ति भी प्राप्त है तथा यह राष्ट्रपति के ऊपर महाभियोग भी लगा सकती है। संसद द्वारा अपने सदस्यों की कुछ समितियों गठित की जाती है ताकि प्रभावपूर्ण तरीके से कार्य हो सके। सरकार पर अंकुश लगाने के लिये संसद के पास कई विकल्प होते हैं। जैसे– प्रश्नकाल, स्थगन प्रस्ताव, ध्यान आकर्षण प्रस्ताव इत्यादि। बजट पारित करना संसद का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। संसद सरकार के कार्यों की जाँच करने का भी अवसर प्रदान करती है।

7.9 उपयोगी संदर्भ

बसु, दुर्गादास, (1983), *कमेंटी ऑन दी कंस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया,* नई दिल्ली, प्रेंटीस हाल।

ग्रेनविल ऑस्टिन (1964), भारत का संविधान, राष्ट्र का प्रतीक, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

मुखर्जी, हिरेन (1978), पोरट्रेट ऑफ पार्लियामेंट : रिफ्लेक्शंस एन्उ रिफलेमूशन्स, नई दिल्ली, विकास।

चौबे, सिवानी किंकर (2009), भारतीय संविधान की संरचना, नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

7.10 अभ्यास के प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न के उत्तर 1

1) संसद के निचले सदन (लोक सभा) के सदस्य के लिये किसी व्यक्ति को 25 वर्ष की आयु पूरी करना आवश्यक है, तथा राज्य सभा के लिये 30 वर्ष है। दोनों सदनों का

सदस्य होन के लिये वह भारत का नागरिक होना चाहिये। कोई भी सदस्य किसी भी सदन से अयोग्य घोषित किया जा सकता है यदि (1) वह सदन से 60 दिन से अधिक गायब रहता है और वह बिना लोक सभा अध्यक्ष या राज्य सभा के सभापति की अनुमति के अनुपस्थित नहीं रह सकता है। (2) किसी लाभ के पद पर आसीन हो, (3) पागल या अस्वस्थ पाया गया हो (4) और वह किसी अन्य देश की नागरिकता ग्रहण कर ली हो इत्यादि। यदि वो सदस्य राज्य विधान सभा एवं संसद दोनों का सदस्य निर्वाचित हुआ हो तो उसे एक निश्चित समय अवधि में विधान सभा की सदस्यता से इस्तीफा देना जरूरी है यदि वह ऐसा नहीं करता है तो उसकी संसद सदस्यता जब्त हो सकती है।

2) लोक सभा अध्यक्ष को असीम शक्तियाँ प्राप्त है। इनमें कुछ महत्वपूर्ण शक्तियां इस प्रकार है। जैसे– वह लोक सभा की बैठकों की अध्यक्षता करता है। लोक सभा की कार्यवाही संचालित करता है वह सदन में व्यवस्था बनाये रखता है तथा सदन की कार्यवाही सुचारू रूप से चलाता है। वह सदन का मुख्य वक्ता होता है, सदन के कानून की व्याख्या करता है तथा वह सभी विधेयकों खासकर धन विधेयकों को प्रमाणित करता है।

अभ्यास प्रश्न के उत्तर 2

3) 1) सदन की बैठक का प्रथम घंटा प्रश्नकाल के लिये होता है। इसमें कोई भी सदस्य प्रश्न पूछ सकता है तथा उत्तर जान सकता है।

2) स्थगन प्रस्ताव देश के किसी महत्वपूर्ण मुद्दे के लिये लाया जाता है इसमें मौजूदा मुद्दे पर चर्चा को एक तरफ रख दिया जाता है। इस प्रकार के प्रस्ताव पर चर्चा करने का अर्थ है सरकार की निंदा करना। यह एक प्रकार से निंदा प्रस्ताव भी माना जाता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 8 कार्यपालिका*

संरचना

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 भारत का राष्ट्रपति

8.2.1 योग्यताऐं

8.2.2 चुनाव की विधि

8.2.3 राष्ट्रपति का कार्यकाल एवं पद से हटाना

8.3 राष्ट्रपति की शक्तियाँ

8.3.1 आपातकालीन शक्तियाँ

8.4 प्रधानमंत्री

8.4.1 मंत्रीपरिषद और कैबिनेट

8.4.2 सामूहिक उत्तरदायित्व

8.5 कैबिनेट और संसद

8.5.1 प्रधानमंत्री की शक्तियों का स्रोत एवं प्रभाव

8.6 राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री

8.7 सारांश

8.8 उपयोगी संदर्भ

8.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

सभी संसदीय प्रणालियों की तरह, भारत में भी नाममात्र की और वास्तविक कार्यपालिका प्रणाली है। यह इकाई भारत के राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री एवं मंत्रीपरिषद के बारे में विस्तृत विवरण प्रस्तुत करेगी। इस इकाई को जानने के बाद आप यह जान सकेंगे :

- राष्ट्रपति की शक्तियों का विश्लेषण करना;
- राष्ट्रपति के चुनाव की प्रक्रिया को समझना;
- मंत्रीपरिषद के गठन एंव कार्यों की व्याख्या करना;
- प्रधानमंत्री की शक्तियों एवं प्रभाव के स्रोत की पहचान करना; और
- भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री की स्थिति की चर्चा करना।

8.1 भूमिका

भारत में कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति में निहित है। राष्ट्रपति राज्य का मुखिया एवं राष्ट्र का प्रतीक है। संविधान ने राष्ट्रपति को असीम शक्तियाँ प्रदान की है लेकिन उन्हें शासन करने की शक्ति प्राप्त नहीं है। राष्ट्रपति केवल औपचारिक भूमिका निभाता है। जबकि

*प्रोफेसर विजयशेखर रेड्डी, राजनीतिक विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, नई दिल्ली, इग्नू, बी.पी.एस.ई.–212, यह इकाई बी.पी.एस.ई.–212 की 11 से अनुकूलित है।

प्रधानमंत्री के पास वास्तविक कार्यपालिका शक्तियाँ होती है। यद्यपि, राष्ट्रपति राज्य का अध्यक्ष (मुखिया) होता है और प्रधानमंत्री सरकार का मुखिया होता है। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह से सरकार के कार्यों को पूरा करता है। इन दोनों राष्ट्रीय अध्यक्षों का चुनाव कैसे होता है? राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री की भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में क्या स्थिति है? भारतीय संसदीय व्यवस्था में इन दोनों के बीच क्या संबंध है? ये कुछ प्रश्न हैं जिन्हें हम इस इकाई में समझेंगे।

8.2 भारत का राष्ट्रपति

संविधान के अंतर्गत यह प्रावधान किया गया है कि राष्ट्रपति केवल राज्य का अध्यक्ष होगा लेकिन उन्हें वास्तविक शक्तियाँ प्रदान नहीं की गयी है। राष्ट्रपति का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से पाँच वर्षों के लिए किया जाता है और उन्हें केवल महाभियोग से संसद द्वारा ही पद से हटाया जा सकता है। संविधान में उपराष्ट्रपति के पद का भी प्रावधान किया गया है। उप–राष्ट्रपति का चुनाव भी अप्रत्यक्ष रूप से होता है और वे राष्ट्रपति के अनुपस्थिति में राष्ट्रपति के कार्यों का निर्वहन करता है। यदि राष्ट्रपति त्यागपत्र दे, उन्हें महाभियोग द्वारा अपने पद से हटाया गया हो या उनकी मृत्यु हो गयी तब उप–राष्ट्रपति उनके कार्य करता है।

8.2.1 योग्यताएं

संविधान के अनुच्छेद 58 और 59 में राष्ट्रपति के पद से संबंधित योग्यताऐं दी गयी है। राष्ट्रपति के पद के लिए किसी भी व्यक्ति को भारत का नागरिक होना चाहिये, वे 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुके हों, तथा उनके पास वे सभी योग्यताऐं होनी चाहिए जो कि लोक–सभा सदस्य की होती है। उन्हें किसी भी लाभ के पद पर आसीन नहीं होना चाहिए। वे संसद के किसी भी सदन तथा राज्य विधान सभा का सदस्य भी नहीं होना चाहिये। इसके अलावा संसद द्वारा तय की गयी समय–समय पर अन्य योग्यताऐं भी उनके पास होना आवश्यक है।

8.2.2 चुनाव की विधि

संविधान में राष्ट्रपति के चुनाव से संबंधित प्रावधान किये गये है। राष्ट्रपति का चुनाव अप्रत्यक्ष तरीके से संसद के दोनों सदनों के चुने हुए सदस्य एवं राज्य विधान सभाओं के चुने हुए सदस्यों द्वारा किया जाता है। यह चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली एवं सिंगल ट्रांसफेयरेबल मत द्वारा किया जाता है। यह प्रणाली सार्वभौमिक एकरूपता के सिद्धांत पर आधारित होती है जिसमें राज्य एवं केन्द्र के बीच एक–रूपता पायी जाती है। चुनाव प्रक्रिया इस प्रकार पूरी की जाती है ताकि पूर्ण रूप से राष्ट्रीय प्रत्याशी ही राष्ट्रपति के लिए चुना जा सके।

राज्यों में एकरूपता लाने के लिए प्रत्येक सदस्य का वोट गिना जाता है। इस वोट का मूल्य वहां की जनसंख्या के आधार पर तय किया जाता है। वोट का मूल्य राज्य की जनसंख्या को वहां की विधान सभा की कुल सदस्य संख्या से विभाजित किया जाता है तब निर्धारित होता है। राज्य विधान सभा के हर सदस्य के वोट का मूल्य प्रत्येक राज्य में अलग–अलग होगा। संसद के प्रत्येक सदस्य के वोट का मूल्य निकालने के लिये सारी विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्यों के कुल मतों के मूल्य को संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या से विभाजित किया जाता है।

राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिये एकल संक्रमणीय सिंगल ट्रांसफेयरेबल मत द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति को अपनाया जाता है। सभी मतदाता प्रथम और द्वितीय वरीयता के

आधार पर मत देता है जो प्रत्याशी पूर्ण बहुमत प्राप्त कर लेता है वही विजयी घोषित किया जाता है। यदि किसी भी प्रत्याशी को प्रथम मतगणना में बहुमत नहीं प्राप्त होता है तब द्वितीय वरीयता के मतों की गणना की जाती है और यह क्रम तब तक चलता है जब तक कि कोई भी प्रत्याशी 50 प्रतिशत के आंकड़े को छू ना ले। यह पद्धति इसलिए अपनायी गयी है ताकि राष्ट्रपति के चुनाव केन्द्र और राज्यों के मध्य संतुलन बनाया जा सके। इस तरह से राष्ट्रपति केन्द्र और राज्य दोनों का प्रतिनिधित्व करता है और इससे भारतीय राजनीति का संघीय चरित्र भी दिखाई देता है।

8.2.3 राष्ट्रपति का कार्यकाल एवं पद से हटाने की प्रक्रिया

राष्ट्रपति का कार्यकाल पाँच वर्ष का होता है। उनका कार्यकाल पद ग्रहण करने के दिन से शुरू होता है। उन्हें भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा पद और गोपनीयता की शपथ दिलायी जाती है। राष्ट्रपति दूसरे कार्यकाल के लिए भी चुनाव लड़ सकता है। डा0 राजेन्द्र प्रसाद दो बार राष्ट्रपति चुने गये थे बावजूद कि उन्हें प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू का समर्थन प्राप्त नहीं था लेकिन काँग्रेस के सदस्यों का समर्थन प्राप्त था।

राष्ट्रपति अपने पद पर तब तक बने रहता है जब तक नया राष्ट्रपति पद पर ना आ जाये। यदि राष्ट्रपति त्यागपत्र देना चाहे तो वे अपना त्यागपत्र उप–राष्ट्रपति को सौंप सकते है। यदि राष्ट्रपति का पद रिक्त रहता है तो उप–राष्ट्रपति उनका चार्ज ले सकते है। लेकिन राष्ट्रपति का चुनाव उनके पद के रिक्त होने के छः माह के अंदर कराया जाना आवश्यक है।

अनुच्छेद 56 और 61 के अंतर्गत राष्ट्रपति के विरूद्ध महाभियोग की प्रक्रिया का प्रावधान है। इस संबंध में, संविधान के अंतर्गत यह प्रावधान है कि यदि राष्ट्रपति ''संविधान की अवहेलना'' करता है तो यह प्रमुख कारण होगा उसके खिलाफ महाभियोग लाने का। महाभियोग की प्रक्रिया संसद के किसी भी सदन में शुरू की जा सकती है लेकिन इसे सदन के दो–तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है। यदि दूसरा सदन भी दो–तिहाई के बहुमत से इसे पास कर दे तो राष्ट्रपति के खिलाफ महाभियोग लगाया जाता है तथा उन्हें तुरंत अपने पद से त्यागपत्र देना पड़ता है। इस प्रकार राष्ट्रपति को पद से हटाने की प्रक्रिया काफी जटिल है और संसद इसका दुरूपयोग भी नहीं कर सकती। अभी तक किसी भी राष्ट्रपति के विरूद्ध महाभियोग नहीं लाया गया है।

8.3 राष्ट्रपति की शक्तियाँ

अनुच्छेद 53 के अंतर्गत राष्ट्रपति को कार्यपालिका शक्तियाँ प्रदान की गयी है। राष्ट्रपति की शक्तियों को दो भागो में विभाजित किया गया है (1) साधारण और (2) आपातकालीन। साधारण शक्तियों को भी चार भागों में बाँटा गया है। कार्यपालका, विधायिका, वित्तीय एवं न्यायिक। कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति में निहित है। संविधान के अनुच्छेद 53 के अंतर्गत राष्ट्रपति को सभी कार्यपालिका शक्तियाँ प्रदान की गयी है जिन्हें राष्ट्रपति स्वयं या अपने अधीन पदाधिकारियों द्वारा इस्तेमाल करते है। अनुच्छेद 75 के अंतर्गत यह प्रावधान है कि प्रधानमंत्री अपने सभी कार्यों को राष्ट्रपति को सूचित करेंगे। अनु0 77 में यह कहा गया है कि केन्द्र की कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति के नाम से इस्तेमाल की जायेगी।

राष्ट्रपति को प्रशासनिक और सैनिक शक्तियाँ भी प्राप्त है। राष्ट्रपति तीनों सेवाओं का अध्यक्ष होता है। सैनिक बलों की सभी नियुक्तियाँ राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की भी नियुक्ति करता है तथा प्रधानमंत्री की सलाह पर मंत्री परिषद के सदस्यों की नियुक्ति करता है। इसके अलावा राष्ट्रपति भारत के अटार्नी जनरल, सर्वोच्च न्यायालय

के न्यायाधीश, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, विशेष आयोग के सदस्यों की नियुक्ति तथा राज्यों के राज्यपालों की भी नियुक्ति करता है। प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने विवेक से नहीं करते बल्कि लोक सभा के बहुमत प्राप्त दल के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त किया जाता है।

राष्ट्रपति सैनिक बलों का कमाण्डर इन चीफ़ होता है। वह थल सेना, वायु सेना और जल सेना के अध्यक्षक्षों की नियुक्ति करता है। उन्हें युद्ध की घोषणा करने और शांति बहाल करने का अधिकार दिया गया है। लेकिन वे ये सब अधिकार संसद की अनुमति के बिना इस्तेमाल नहीं कर सकते हैं। हालांकि राष्ट्रपति संसद के किसी भी सदन का सदस्य नहीं है फिर भी अनु0 79 के अंतर्गत राष्ट्रपति संसद का अभिन्न अंग होता है। जैसा कि हमने इकाई 7 के अंतर्गत देखा है राष्ट्रपति को संसद के दोनों सदनों को समन करने का अधिकार है तथा वे संसद की संयुक्त बैठक को भी संबोधित करते हैं। राष्ट्रपति ही राज्य सभा में 12 सदस्यों को मनोनीत करता है तथा उन्हें लोक–सभा को भंग करने का भी अधिकार है। संसद में प्रस्तावित सभी धन विधेयकों को राष्ट्रपति की मंजूरी लेना आवश्यक है। नये राज्यों के निर्माण, क्षेत्रों में बदलाव, राज्यों के नाम में परिवर्तन तथा राज्यों की सीमा में परिवर्तन करते समय भी राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति लेना अनिवार्य है। अंत में, कोई भी विधेयक जो कि संसद द्वारा पारित हो चुका हो वह कानून तभी बन सकता है जब राष्ट्रपति इस पर अपनी सहमति दे दे। राष्ट्रपति किसी भी विधेयक को अपने पास रख सकते हैं या उसे पुनः संशोधन के लिए भेज सकते हैं। लेकिन, यदि उस विधेयक को दोनों सदन फिर से पारित कर दे तो फिर उसे राष्ट्रपति को मंजूरी देना आवश्यक होता है। यदि संसद का सत्र नहीं चल रहा हो उस समय राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वे जनता के हित में अध्यादेश ला सकते हैं। इन अध्यादेशों का असर भी उतना ही होता है जितना कि संसद में पारित कानूनों का असर। लेकिन इन अध्यादेशों को संसद के सामने लाया जाना आवश्यक है। संसद की अनुमति के बिना ये अध्यादेश वैद्य नहीं माने जायेंगे।

अनुच्छेद 254 के अंतर्गत राष्ट्रपति को यह अधिकार भी दिया गया है वे समवर्ती सूची में शामिल विषयों पर केन्द्र और राज्यों के मध्य विवाद को दूर कर सके। एक अन्य विधायी कार्य भी राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है। वे राज्यों के राज्यपाल द्वारा भेजे गये राज्यों के विधेयकों को भी अपनी मंजूरी देते है। राष्ट्रपति की न्यायिक शक्तियों में सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति, क्षमा याचना, सजा कम करना इत्यादि शामिल है। क्षमा याचना किसी भी व्यक्ति को मानवीय आधार पर दी जाती है ताकि कानून कठोर न हो। राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय से संवैधानिक, कानूनी एवं राजनयिक मामलों में सलाह लेने का अधिकार है। 1977 में राष्ट्रपति ने सर्वोच्च न्यायालय से आपात स्थितियों में विशेष कोर्ट बनाने की सलाह ली थी।

8.3.1 आपातकालीन शक्तियाँ

भारत की संप्रभुता, अखंडता, एकता और स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए संविधान ने राष्ट्रपति को कुछ आपातकालीन शक्तियाँ प्रदान की है। राष्ट्रपति तीन प्रकार की आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं। (1) राष्ट्रीय आपातकाल, विशेषकर, युद्ध की स्थिति में, बाहरी आक्रमण या सैनिक विद्रोह होने पर, (2) राज्य में संवैधानिक संकट उत्पन्न होने की स्थिति में तथा (3) वित्तिय आपातकाल।

राष्ट्रपति किसी भी समय राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं यदि उन्हें ऐसा महसूस हो कि देश की सुरक्षा खतरे में है। ऐसी स्थिति या तो युद्ध, बाहरी आक्रमण या फिर सैनिक विद्रोह से उत्पन्न हो सकती है। लेकिन इसे संसद में मंजूरी के लिए प्रस्तुत किया जाता है। इसके लिए दोनों सदनों के दो तिहाई बहुमत से पारित करना जरूरी है तथा यह

एक माह में स्वीकार करना आवश्यक है। यदि संसद इसे मंजूरी देने से मना कर दे तो यह निरस्त हो जायेगा। यदि इसे मंजूरी मिल जाती है तो यह छः महीने तक जारी रहेगी। लेकिन यह आपातकाल और आगे भी बढ़ाया जा सकता है यदि राष्ट्रपति हर छः माह बाद इसे मंजूरी देते रहें। लेकिन संसद को इस आपातकाल को हटाने का पूरा अधिकार है। इसके लिए संसद में प्रस्ताव पर मतदान होता है फिर इसे संसद में बहुमत से पारित करवाया जाता है। भारत में सर्वप्रथम 1962 में राष्ट्रीय आपातकाल लगाया गया था जब चीन ने आक्रमण किया था। दूसरी बार 1971 में जब बँग्लादेश युद्ध हुआ तब। तीसरी बार 1975 में आपातकाल लगाया गया था, जब प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने राष्ट्रपति को राष्ट्रीय सुरक्षा पर खतरा बताते हुए सलाह दी थी।

धारा 356 के अनुसार किसी राज्य में संविधानिक तंत्र के विफल होने की स्थिति में राष्ट्रपति शासन लागू किया जा सकता है। परन्तु 1994 के उच्चतम न्यायालम के आदेश, जिसे बोमई केस के नाम से जाना गया, राष्ट्रपति शासन लगाना कठिन हो गया है। इसके अनुसार राष्ट्रपति किसी राज्य सरकार को केवल उसी स्थिति में बर्खास्त कर सकती है, जब इसके प्रस्ताव को संसद के दोनों सदनों पारित किया है। यदि संसद के दोनों सदन इसे पारित नहीं करते हैं तब सरकार के बर्खास्त होने के दूसरे महीने के अंत में प्रस्ताव रद्द हो जाता है, तथा बर्खास्त सरकार पुनः स्थापित हो जाती है। इस केस में, 1989 में कर्नाटक में एस.आर. बोमाई (मुख्य मंत्री) की सरकार से 19 मत्रियों ने राज्यपाल को सरकार से अपना समर्थन लेते हुए पत्र लिखा। जिसके आधार पर राज्यपाल ने सरकार को भंग कर दिया। परन्तु कुछ ही समय में मंत्रियों ने सरकार को अपना सर्मथन फिर से दे दिया। लेकिन राज्यपाल ने बोमाई को विधान सभा पटल पर अपना बहुमत साबित करने के लिए अवसर नहीं दिया तथा सरकार को इस आधार पर भंग कर दिया कि उसने अपना बहुमत खो दिया। बोमई ने राज्यपाल के निर्णय को न्यायालय में चुनौती दी न्यायलय ने 1994 में बोमई केस में अपना फैसला सुनाया। राष्ट्रपति शासन कम से कम छः माह तक लागू रहता है। संसद के 44वें संशोधन के तहत इसे छः माह तक और बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार यह एक वर्ष से अधिक नहीं लगाया जा सकता है यदि देश में राष्ट्रीय आपातकाल न हो तो। राज्य में आपातकाल की कुल अवधि तीन वर्ष से अधिक नहीं हो सकती है। इसके अलावा, यदि राज्य सरकार केन्द्र सरकार के निर्देशों का पालन करने से मना कर दे तो भी उस राज्य पर आपातकाल लगाया जा सकता है।

राष्ट्रपति देश में वित्तिय आपातकाल की घोषणा भी कर सकते हैं। संविधान के अनुच्छेद 360 में इसका उल्लेख किया गया है। यदि देश में वित्तिय संकट हो तो राष्ट्रपति इसे राष्ट्रीय आपातकाल मानकर वित्तिय आपातकाल की घोषणा कर सकते है। लेकिन इसके लिए भी संसद की मंजूरी लेना आवश्यक है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि राष्ट्रपति के पास असीम शक्तियाँ है। लेकिन हकीकत में वे इन शक्तियों का इस्तेमाल प्रधानमंत्री की सलाह या मंत्रीपरिषद की सलाह पर करता है। इस प्रकार राष्ट्रपति की स्थिति ब्रिटिश सम्राट की तरह है न कि अमेरिका के राष्ट्रपति की तरह। यद्यपि राष्ट्रपति राज्य का अध्यक्ष या मुखिया है लेकिन सरकार का मुखिया प्रधानमंत्री ही होता है।

अभ्यास के प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) भारत में राष्ट्रपति का चुनाव कैसे होता है?

....

....

2. राष्ट्रपति की विधायी शक्तियाँ कौनसी है?

....

....

....

....

....

8.4 प्रधानमंत्री

संविधान के अंतर्गत वास्तविक शक्तियाँ प्रधानमंत्री के पास होती है वे सभी कार्यपालिका शक्तियों का अधिकार रखते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रीपरिषद के मुखिया होते हैं। राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद की सलाह पर ही कार्य करते हैं। मंत्रीपरिषद वास्तविक रूप में कार्यपालिका होती है न कि राष्ट्रपति।

ब्रिटेन की तरह, भारत में भी प्रधानमंत्री निम्न सदन का नेता होता है। वह सामान्यतया, निचले सदन यानी लोकसभा का सदस्य होता है। जब इंदिरा गाँधी 1966 में प्रधानमंत्री बनी तब वे राज्य सभा की सदस्य थी। लेकिन जब वे लोक सभा में चुनी गयी तब से यह परंपरा बनी कि प्रधानमंत्री भी लोकसभा का सदस्य होता है। प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। राष्ट्रपति के पास प्रधानमंत्री नियुक्त करने के लिये ज्यादा विकल्प नहीं होते हैं। वे केवल लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त कर सकते हैं। लेकिन ऐसा करते समय वे पूर्ण रूप से संतुष्ट होना चाहते हैं कि वे सदन में अपना बहुमत सिद्ध कर देंगे। प्रधानमंत्री राष्ट्रपति की इच्छा तक अपने पद पर बने रह सकते हैं। राष्ट्रपति की इच्छा से तात्पर्य है प्रधानमंत्री को लोक सभा में पूरा बहुमत प्राप्त हो।

राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह पर अन्य मंत्रियों की भी नियुक्ति करता है। मंत्री किसी भी सदन से बनाया जा सकता है, वह किसी भी सदन की कार्यवाही में भाग ले सकता है, लेकिन वह उसी सदन में वोट दे सकता है जिस सदन का सदस्य हो। कोई भी व्यक्ति यदि किसी भी सदन का सदस्य नहीं है उसे मंत्री बनाया जा सकता है लेकिन उसे छः महीने के अंदर दोनों सदनों में से किसी एक का सदस्य बनना जरूरी है।

8.4.1 मंत्री परिषद और कैबिनेट

कैबिनेट को साधारण भाषा में मंत्रीपरिषद भी कहा जाता है। लेकिन ये दोनों अलग है। मंत्रीपरिषद में कई प्रकार के मंत्री शामिल होते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व भारत में कैबिनेट नामक संस्था नहीं थी। उस समय कार्यकारी परिषद होती थी। 15 अगस्त 1947 को कार्यकारी परिषद को परिवर्तित करके मंत्री परिषद में बदल दिया गया जो कि संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। 'कैबिनेट' शब्द का प्रयोग मंत्री परिषद के विकल्प के तौर पर किया गया। इस स्तर पर कैबिनेट के सभी मंत्री एक समान होते है प्रधानमंत्री को छोड़कर। लेकिन जब से कनिष्ठ सदस्यों को मंत्रीमंडल में शामिल किया गया तब से परिस्थिति बदल गयी है। 1950 में 'गोपालस्वामी आयंगर गठित समिति की सिफारिशों के पश्चात् त्रि–स्तरीय मंत्रिपरिषद का गठन किया गया। इसमें सबसे ऊपर कैबिनेट रैंक के मंत्री होते है। मध्य स्तर पर राज्य मंत्री तथा निचले स्तर पर उप–मंत्री होते हैं।

कैबिनेट रैंक के मंत्री सबसे वरिष्ठ मंत्री होते हैं जो प्रशासन की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी निभाते है। यह सबसे शक्तिशाली निकाय होती है। यह सरकार को सबसे छोटी निकाय

होती है लेकिन बहुत महत्वपूर्ण होती है। कैबिनेट के तीन महत्वपूर्ण कार्य होते हैं। (1) सरकार की नीतियों को संसद में प्रस्तुत करती है (2) सरकार की नीतियों को लागू करने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी निभाती है। (3) यह सभी विभागों एवं मंत्रालयों के बीच समन्वय स्थापित करती है। कैबिनेट सामान्यतः नियमित रूप से मिलती है क्योंकि यह निर्णय–निर्माण करने वाली संस्था है। इसे कैबिनेट सचिवालय द्वारा सहायता मिलती है जिसमें एक कैबिनेट सचिव होता है तथा अन्य वरिष्ठ अधिकारी होते है। कार्य को सुगमता से करने के लिए कैबिनेट की अन्य समितियाँ भी होती है। ये स्थायी समितियाँ एवं तदर्थ समितियाँ होती है। इसको चार स्थायी समिति एवं कुछ तदर्थ समितियाँ होती है। स्थायी समिति इस प्रकार हैः (1) रक्षा समिति, (2) आर्थिक समिति (3) प्रशासनिक समिति तथा (4) संसदीय एवं कानूनी मामलों की समिति। अस्थायी या तदर्थ समितियाँ समय–समय पर गठित की जाती है।

दूसरी रैंक के मंत्री राज्य मंत्री होते हैं। ये स्वतंत्र प्रभार वाले मंत्री होते है तथा उन्हें भी कैबिनेट मंत्रियों की तरह कार्य करने का अधिकार प्राप्त है। राज्य मंत्रियों एवं कैबिनेट मंत्रियों में केवल इतना फर्क है कि राज्य मंत्री कैबिनेट की बैठकों में हिस्सा नहीं ले सकते। वे केवल तभी कैबिनेट की बैठकों में हिस्सा लेते हैं जब उन्हें बुलाया जाता है। कुछ अन्य मंत्री भी होते है जो प्रत्यक्ष रूप से कैबिनेट के अधीन कार्य करते हैं।

निचले स्तर पर उप–मंत्री होते हैं जिन्हें कुछ खास प्रशासनिक जिम्मेदारियाँ दी जाती है। ये मंत्री अन्य मंत्रियों से भिन्न होते हैं। इनकी मुख्य जिम्मेदारी इस प्रकार है। (1) संसद में पूछे गये प्रश्नों का जवाब देना तथा संबंधित मंत्री की सहायता करना, (2) आम जनता को सरकार की नीतियों के बारे में बताना, संसद के सदस्यों के साथ अच्छा व्यवहार रखना, राजनीतिक दलों एवं प्रेस के साथ अच्छा संबंध बनाना। (3) किसी खास समस्या की जाँच पड़ताल करना जो उन्हें किसी संबंधित मंत्री द्वारा दी गयी हो। उपर्युक्त बातों से यह पता चलता है कि, कैबिनेट मंत्रीपरिषद की धुरी है। इस वजह से वॉल्टर बेगहोट कैबिनेट विधायिका को सबसे बड़ी समिति कहते हैं। यह कार्यपालिका एवं विधायिका के बीच कड़ी का काम करती है तथा कार्यपालिका एवं विधायिका की शक्तियों को एक साथ जोड़ती है।

8.4.2 सामूहिक उत्तरदायित्व

मंत्रीपरिषद सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत पर कार्य करती है। इस सिद्धांत के अंतर्गत सभी मंत्री अपने कार्य के प्रति एवं सरकार के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होते हैं। सामूहिक नेतृत्व के अंतर्गत, सभी मंत्री कैबिनेट के निर्णयों की जिम्मेदारी सामूहिक रूप से साझा करते हैं। शंका एवं असहमति केवल, कैबिनेट के कमरे तक सीमित रहती है। एक बार यदि कोई निर्णय ले लिया तो यह सम्पूर्ण सरकार का निर्णय माना जाता है। यदि कोई मंत्री सरकार के निर्णयों से सहमत नहीं है तथा उनका समर्थन नहीं करता है तो उसे नैतिक आधार पर मंत्रीपरिषद से त्यागपत्र देना पड़ता है।

यदि मंत्रीपरिषद का गठन विभिन्न राजनीतिक दलों के गठबंधन से किया गया हो तो यह न्यूनतम साझा कार्यक्रम पर आधारित होता है ताकि सभी मंत्रालयों में सामन्जस्य बना रहे तथा सभी राजनीतिक दलों को न्यूनतम साझा कार्यक्रम के साथ खड़ा रहना चाहिये। यदि वे ऐसा नहीं करते तो मंत्रीपरिषद अस्तित्व में नहीं रह सकती। मंत्रीपरिषद के भीतर एकता न केवल इसके लिए अनिवार्य है बल्कि इसको कुशलता और कार्यक्षमता के लिए भी जरूरी है। इसके लिए जनता का विश्वास जीतना भी आवश्यक है। जनता सरकार के सदस्यों के बीच सार्वजनिक आक्षेप और लोक नीति जैसे मामलों में आपसी टकराव इसके पतन का प्रमुख कारण था 1979 में।

8.5 कैबिनेट और संसद

संसदीय सरकार का मूलभूत तत्व प्रधानमंत्री और इसके कैबिनेट का संसद के प्रति उत्तरदायी होना है। संसद शासन नहीं चलाती बल्कि सरकार की नीतियों का आलोचनात्मक परीक्षण करती है तथा इसे उचित एवं अनुचित मानकर कार्यों की समीक्षा करती है। प्रधानमंत्री एवं इसके मंत्रीपरिषद का अस्तित्व संसद के समर्थन पर निर्भर है। जैसा हमने देखा है, मंत्रीपरिषद सामूहिक रूप से संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। इस प्रकार सामान्य तौर पर यह माना जाता है कि संसद कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है। लेकिन यथार्थ में, प्रधानमंत्री ही अपने बहुमत के बल पर संसद की कार्यप्रणाली पर नियंत्रण रखते हैं।

8.5.1 प्रधानमंत्री की शक्तियों एवं प्रभाव का स्रोत

हालांकि संविधान में प्रधानमंत्री की शक्तियों का कहीं भी उल्लेख नहीं है, लेकिन व्यावहारिक रूप में वे कई प्रकार की शक्तियों का इस्तेमाल करते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रीपरिषद का मुखिया होता है तथा लोक–सभा का नेता होता है। प्रधानमंत्री का यह विवेकाधिकार है कि वे अपने मंत्रीमंडल का गठन खुद करते हैं। वे कैबिनेट की बैठकों की अध्यक्षता करते हैं तथा उन्हें संसद के सदस्यों को प्रभावित करने की क्षमता होती है। प्रधानमंत्री अपने मंत्रीमंडल के सदस्यों को चुनने के लिए स्वतंत्र होता है लेकिन उसे अपने दल के भीतर समर्थन प्राप्त करना जरूरी होता है। उदाहरण के लिए प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने सरदार पटेल को अपना उप–प्रधानमंत्री नियुक्त किया क्योंकि पटेल पार्टी में बहुत बड़े नेता थे तथा उन्हें नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था। पटेल के समर्थकों को मंत्रीमंडल में भी जगह दी गयी थी। इसी प्रकार श्रीमती इंदिरा गाँधी ने भी पार्टी के बड़े नेताओं को अपने मंत्रीमंडल में जगह दी थी। 1971 के मध्यावधि चुनावों के बाद इंदिरा गाँधी सबसे मजबूत नेता बनकर सामने आयी थी इसलिए उन्हें पूरी आजादी थी अपने मंत्रियों को चुनने की। लेकिन गठबंधन सरकारों में प्रधानमंत्री के पास अपने मंत्रियों को चुनने का ज्यादा विकल्प नहीं होता है। जनता सरकार में मोरारजी देसाई के कार्यकाल में ऐसे ज्यादा मंत्री थे जिन्हें वे जानते भी नहीं थे। इसी तरह से एच0डी0 देवगौड़ा और इन्द्र कुमार गुजराल की सरकार में भी 14 पार्टियाँ शामिल थी जिसने संयुक्त मोर्चा का गठन किया उसमें भी मंत्रियों का चयन पार्टियों के द्वारा किया गया।

प्रधानमंत्री संसद में बहुमत वाली पार्टी के नेता होते है इसलिए उन्हें सबसे ज्यादा ताकतवर समझा जाता है। वे संसदीय शासन प्रणाली में अपनी पार्टी के मजबूत नेता माने जाते हैं। लोकसभा के नेता होने के कारण प्रधानमंत्री के पास संसदीय कार्यप्रणाली के ऊपर नियंत्रण होता है। वे राष्ट्रपति को संसद के सत्र की सूचना देते है। लोकसभा अध्यक्ष भी लोक–सभा की कार्यवाही के लिए प्रधानमंत्री से सलाह करते हैं। जब संसद का सत्र नहीं चल रहा हो तब प्रधानमंत्री के पास राष्ट्रपति को अध्यादेश लाने की शक्तियाँ होती है। सबसे अधिक शक्ति प्रधानमंत्री की होती है लोक सभा को भंग करने की। राष्ट्रपति को प्रधानमंत्री की सलाह मानना जरूरी है। इसी शक्ति से ही प्रधानमंत्री विपक्ष पर भी नियंत्रण रखता है।

सरकार का मुखिया होने के कारण प्रधानमंत्री को असीमित अधिकार दिये गये है। सरकार की सभी महत्वपूर्ण नियुक्तियाँ प्रधानमंत्री ही राष्ट्रपति के नाम पर करते हैं। इनमें सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीश, अटार्नी जनरल, सेना प्रमुख, जल प्रमुख एवं वायु सेना प्रमुख शामिल है। सभी राज्यों के राज्यपाल, राज–दूत, उच्च आयुक्त तथा चुनाव आयोग के सदस्यों की नियुक्ति भी प्रधानमंत्री की सलाह पर की जाती है।

प्रधानमंत्री अन्य प्रशासनिक एजेंसियों जैसे सी.बी.आई., इत्यादि पर भी नियंत्रण रखता है। इन सब कारणों के अलावा अन्य कुछ विशेषताऐं भी है जिस कारण प्रधानमंत्री को और भी

शक्तियाँ प्राप्त है। कई ऐसे उदाहरण है जिसने प्रधानमंत्री को बहुत ही लोकप्रिय बनाया है। कभी–कभी अपने करिश्माई नेतृत्व की वजह से भी बहुत से प्रधानमंत्री लोकप्रिय हुए है जैसे जवाहरलाल नेहरू, इंदिरा गाँधी और वर्तमान में नरेन्द्र मोदी।

अभ्यास के प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) कैबिनेट के तीन प्रमुख कार्य कौन–कौन से है?

....

....

....

....

....

....

2) सामूहिक उत्तरदायित्व क्या है?

....

....

....

....

....

....

3) संसदीय प्रणाली में प्रधानमंत्री की शक्तियाँ कौन–कौन सी है?

....

....

....

....

....

....

8.6 राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री

संविधान के अनुच्छेद 78 के अंतर्गत प्रधानमंत्री के कर्त्तव्यों का विवरण है। (1) प्रधानमंत्री राष्ट्रपति को मंत्रीपरिषद के फैसलों की जानकारी देता है। (2) केन्द्र के सभी कार्यों एवं प्रस्तावों को राष्ट्रपति की मंजूरी के लिए सूचित करते हैं। (3) यदि राष्ट्रपति चाहे तो मंत्रीपरिषद के निर्णयों की जानकारी ले सकते है। ये कर्त्तव्य ही प्रधानमंत्री को राष्ट्रपति से कमतर समझते है। इसी वजह से राष्ट्रपति वास्तविक कार्यपालिका भी है। लेकिन जैसा कि हम देख चुके हैं राष्ट्रपति अपने अधिकारों का प्रयोग मंत्रीपरिषद की सलाह पर करता

है। और प्रधानमंत्री जो कि मंत्रीपरिषद का मुखिया होता है वही वास्तविक कार्यपालिका भी है। लेकिन कई ऐसे अवसर भी आते है जब राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के बीच कई नीतियों पर मतभेद नजर आते हैं। प्रथम राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद ने इस परंपरा को तोड़ा कि राज्याध्यक्ष हमेशा प्रधानमंत्री या मंत्रीपरिषद की सलाह मानने को बाध्य है। उदाहरण के तौर पर वे नेहरू जी से इस बात पर नाखुश थे क्योंकि नेहरू जी हिन्दू पसर्नल लॉ में सुधार करने का प्रयास कर रहे थे। 1987 में राष्ट्रपति ज्ञानी जेल सिंह ने भारतीय डाक विधेयक को मंजूरी देने से मना कर दिया। इस बिल को संसद ने मंजूरी दे दी थी फिर भी राष्ट्रपति ने इसे मंजूरी नहीं दी। इस प्रकार राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री राजीव गाँधी के बीच मतभेद सामने आये।

8.7 सारांश

ब्रिटिश प्रणाली की तर्ज पर भारत में भी संसदीय शासन प्रणाली को अपनाया गया। इसके अंतर्गत कार्यपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी है। भारत में कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति के पास होती है जो कि राज्य का अध्यक्ष होता है तथा राष्ट्र का प्रतीक भी माना जाता है। राष्ट्रपति के पास कुछ महत्वपूर्ण शक्तियाँ होती है। राष्ट्रपति इन शक्तियों का इस्तेमाल मंत्रीपरिषद की सलाह पर करता है। प्रधानमंत्री मंत्री परिषद का मुखिया होता है। भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में प्रधानमंत्री को वास्तविक शक्तियाँ प्राप्त है। प्रधानमंत्री लोक सभा का नेता होता है तथा बहुमत प्राप्त दल का नेता भी होता है। यद्यपि प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है लेकिन प्रधानमंत्री राष्ट्रपति की इच्छानुसार अपने पद पर बने रह सकते है। वे संसद के प्रति वास्तविक रूप में जिम्मेदार होते हैं। मंत्रीपरिषद सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत पर कार्य करती है। कभी–कभी राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के बीच मतभेद उत्पन्न होते हैं। लेकिन इनसे कभी भी संवैधानिक संकट नहीं हुआ है।

8.8 उपयोगी संदर्भ

1) दास, बी.सी. (1977), भारत का राष्ट्रपति, आर.आर. नई–दिल्ली, प्रिंटर।

2) जैनिंग, सर–आइवर– (1969), कैबिनेट सरकार, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

3) पटनायक, रघुनाथ – (1969), भारत में राष्ट्रपति और राज्यपाल की शक्तियाँ, नई दिल्ली, दीप एण्ड दीप।

4) कश्यप, सुभाष, (1955), भारत में संसद का इतिहास, खंड–2, नई दिल्ली, शिप्रा प्रकाशन।

8.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) राष्ट्रपति का चुनाव संसद के दोनों सदनों एवं राज्य विधान सभाओं के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा किया जाता है। यह सिंगल ट्रांसफयरेबल मत प्रणाली द्वारा होता है।

2) राष्ट्रपति के विधायी कार्य इस प्रकार है : संसद को समन जारी करना, लोक–सभा को भंग करना, अध्यादेश लाना, दोनों सदनों की संयुक्त बैठक को संबोधित करना धन विधेयक को मंजूरी देना, तथा संसद के सदस्यों को मनोनीत करना इत्यादि।

अभ्यास प्रश्न 2

1) कैबिनेट के तीन महत्वपूर्ण कार्य इस प्रकार है : सरकार की नीतियों को संसद में पारित करने के लिए निर्धारित करना, सरकार की नीतियों को लागू करना तथा सभी विभागों में आंतरिक समन्वय स्थापित करना।

2) सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत का अर्थ है सारे मंत्री सरकार के सभी कार्यों के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होंगे।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 9 न्यायपालिका*

संरचना

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 भारत में न्यायपालिका की उत्पत्ति
9.3 सर्वोच्च न्यायालय
    9.3.1 सर्वोच्च न्यायालय की रचना और नियुक्तियाँ
    9.3.2 कार्यालय
    9.3.3 वेतन
    9.3.4 अधिकार (उन्मुक्तियाँ)
9.4 सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र
    9.4.1 आरंभिक क्षेत्राधिकार
    9.4.2 अपीलीय क्षेत्राधिकार
    9.4.3 परामर्शवादी क्षेत्राधिकार
    9.4.4 न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार
9.5 उच्च न्यायालय
    9.5.1 उच्च न्यायालय का गठन (रचना)
    9.5.2 अधिकार क्षेत्र
9.6 अधीनस्थ न्यायालय
9.7 न्यायिक समीक्षा
9.8 न्यायिक सुधार
9.9 सारांश
9.10 उपयोगी संदर्भ
9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह जान सकेंगे :

- भारत में न्यायिक व्यवस्था की उत्तपत्ति का पता लगाना;
- भारत में न्यायालयों की रचना का वर्णन करना;
- सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय एवं अधीनस्थ न्यायालयों के कार्यों एवं क्षेत्राधिकारों की व्याख्या करना; और
- न्यायिक पुनरावलोकन की अवधारणा एवं मौलिक अधिकारों की रक्षा के महत्व को समझना।

*प्रोफेसर विजयशेखर रेड्डी, राजनीतिक विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली, बी.पी.एस.ई.–212, इकाई 12 से अनुकूलित है।

9.1 प्रस्तावना

संवैधानिक सरकार के आधार पर राजनीतिक व्यवस्था के अंतर्गत कानून निर्माण, कानूनों की व्याख्या एवं कानूनों का क्रियान्वयन करने के लिए तीन संस्थाऐं है। (1) विद्यायिका (2) कार्यपालिका एवं (3) न्यायपालिका। न्यायपालिका स्वतंत्र एवं निष्पक्ष होती है तथा यह कार्यपालिका एवं विधायिका की शक्तियों के दुरूपयोग पर अंकुश लगाती है तथा नियंत्रण रखती है। न्यायपालिका का निर्णय अंतिम माना जाता है। संघीय व्यवस्था में, न्यायपालिका केन्द्र एवं राज्यों के बीच विवादों को हल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के कार्यों एवं महत्व को देखते हुए कई प्रकार के कदम उठाये गये है ताकि न्यायपालिका की स्वतंत्रता बरकरार रहे।

9.2 भारत में न्यायपालिका की उत्पत्ति

भारत में न्यायपालिका की उत्पत्ति औपनिवेशिक काल से मानी जाती है। 1773 में रेगूलेटिंग एक्ट (अधिनियम) पारित होने के पश्चात् भारत में प्रथम सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना हुई। यह कलकता में स्थापित किया गया जिसमें एक मुख्य न्यायाधीश एवं तीन अन्य जज थे। इनकी नियुक्ति ब्रिटिश क्राउन के द्वारा की गयी थी। इसे राजा का न्यायालय बनाया गया था न कि कंपनी का कोर्ट। इस कोर्ट में राजा के क्षेत्राधिकार भी शामिल थे। जहाँ पर भी न्यायालय बनाये गये वहीं राजा के अधिकार निर्धारित किये गये। पहली बार सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना मद्रास में हुई तथा इसके बाद बंबई में। इस काल में न्यायिक व्यवस्था दो प्रकार की थी, एक प्रसीडेंसी के अंदर सर्वोच्च न्यायालय तथा प्रांतों के अंदर सदर न्यायालय। सर्वोच्च न्यायालय के अंदर अंग्रेजी कानून एवं प्रक्रियाऐं लागू थी जबकि सदर न्यायालयों में व्यक्तिगत कानून तथा विधिक कानून लागू थे। 1861 के उच्च न्यायालय अधिनियम के अंतर्गत इन दोनों को मिलाकर एक कर दिया गया। इस अधिनियम से सर्वोच्च न्यायालय को कस्बों में बदला गया। कलकत्ता, बंबई और मद्रास में उच्च न्यायालयों की स्थापना की गयी। लेकिन सबसे बड़ा अपील (Appeal) न्यायालय प्रीवी परिषद थी जोकि न्यायिक समिति के अधीन थी।

9.3 सर्वोच्च न्यायालय

संपूर्ण न्यायव्यवस्था तीन स्तरों में विभाजित है। सबसे ऊपर सर्वोच्च न्यायालय है, इसके नीचे उच्च न्यायालय तथा सबसे नीचे सत्र न्यायालय स्थापित है। सर्वोच्च न्यायालय कानून का सर्वोत्तम न्यायालय है। संविधान का मानना है कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित कानून सबके लिए बाध्यकारी होगा विशेषकर भारतीय क्षेत्र के सभी छोटे न्यायालयों में। सर्वोच्च न्यायालय के नीचे उच्च न्यायालय होते हैं जो कि राज्यों में स्थापित होते हैं। इन न्यायालयों में जिला सत्र न्यायालय, अधीनस्थ न्यायालय एवं अन्य छोटे न्यायालय भी शामिल है। संघीय व्यवस्था में न्यायपालिका की महत्ता को देखते हुए सर्वोच्च न्यायालय को भारतीय संविधान की व्याख्या करने का अंतिम अधिकार प्राप्त है। न्यायिक प्रावधानों की रचना करते वक्त संविधान सभा ने न्यायालय की स्वतंत्रता, सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति तथा न्यायिक समीक्षा जैसे मुद्दों पर विशेष ध्यान दिया।

9.3.1 संरचना एवं नियुक्तियाँ

सर्वोच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायधीश के अलावा 26 अन्य न्यायाधीश होते हैं। जब सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गयी थी उस समय मात्र आठ न्यायाधीश थे। अब इसकी संख्या बढ़कर 26 हो गयी है। भारत के राष्ट्रपति द्वारा इनकी नियुक्ति की जाती है लेकिन राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री एवं मंत्रीपरिषद की सलाह पर नियुक्ति करते हैं।

संविधान के अनुच्छेद 124(2) में राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय के जजों की नियुक्ति मंत्रीपरिषद की सलाह के पश्चात् करते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति विभिन्न न्यायाधीशों के साथ विचार–विमर्श करने के बाद करते हैं। सांवैधानिक प्रावधानों के बावजूद सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राजनीतिक विवाद के कारण बन गयी है। यहाँ पर यह जानना जरूरी है कि 1973 में जब सरकार ने न्यायाधीश एस.एस.रे को भारत का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया तब उन्हें चार जजों को दूर रख कर किया गया। उस वक्त के मुख्य न्यायाधीश एस.एम.सीकरी की सिफ़ारिशों को भी सरकार ने नहीं माना था। इसी राजनीतिक हस्तक्षेप से बचने के लिए सर्वोच्च न्यायालय के जजों की नियुक्ति के लिए कुछ योग्यताऐं निर्धारित की गयी है। ये योग्यताऐं इस प्रकार हैः– वह व्यक्ति भारत का नागरिक होना चाहिये, वह किसी उच्च न्यायालय में पाँच वर्ष तक कार्य किया हो, या वह किसी उच्च न्यायालय में दस वर्ष तक वकालत की हो। या फिर वह राष्ट्रपति की राय में एक वरिष्ठ और प्रतिष्ठित विधिवेत्ता हो।

न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए कोलेजियम प्रणाली (अधिशासी) समिति या मंडल की प्रकृति बड़ी अद्भुत है। यह इसलिए भी काफी लोकप्रिय है क्योंकि यह न्यायाधीशों को चयन करने के लिए न्यायाधीश ही होते हैं। इस प्रणाली की शुरूआत 1990 में दो महत्वपूर्ण निर्णयों के बाद हुई थी। इस प्रणाली में एक निकाय या संस्था होती है जिसमें कुछ वरिष्ठ जज होते हैं वो सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के जजों की नियुक्ति एवं तबादले के लिए जिम्मेदार होते हैं।

9.3.2 कार्यकाल

एक बार नियुक्त होने के बाद न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु पूरी होने तक अपने पद पर बने रहते हैं। सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश या तो अपने पद से इस्तीफा दे सकते हैं या फिर उन्हें दुर्व्यवहार या काबिल ना होने पर अपने पद से हटाया जा सकता है। हटाने की प्रक्रिया को महाअभियोग कहते हैं। संविधान के प्रावधानों के मुताबिक इसके लिए संसद में एक प्रस्ताव पारित करना पड़ेगा और उस पर दो–तिहाई बहुमत की आवश्यकता होगी। 1991 में एक जज के खिलाफ़ महाभियोग का प्रस्ताव संसद में पेश किया गया था। इसमें सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश वी. रामास्वामी शामिल थे। इनके कार्यकाल में कई प्रकार की अनियमितताऐं पायी गयी थी इसलिए तीन सदस्यीय जाँच समिति का गठन किया गया था। इस समिति ने यह पाया कि बड़े स्तर पर पद का दुरूपयोग किया गया है तथा इसे जनता के हित को भी चोट पहुँची है और यह पूरी तरह से दुर्व्यवहार का मामला है। इस प्रकार न्यायाधीश वी. रामास्वामी ऐसे पहले जज थे जिनके खिलाफ महाभियोग की कार्यवाही की गयी थी। जज रामास्वामी ने हालांकि यह आरोप लगाया कि इस प्रस्ताव में कई खामियाँ थी इसलिए यह प्रस्ताव 1993 में गिर गया था और पास नहीं हुआ था। इसके पक्ष में कुल 401 में से 196 मत गिरे थे तथा बाकी 205 मतदान प्रक्रिया से बाहर रहे थे। हालांकि बाद में जज रामास्वामी अपने पद से इस्तीफा दे दिया था।

9.3.3 वेतन

न्यायाधीशों का सबसे महत्वपूर्ण तत्व जो कि उनकी स्वतंत्रता को निर्धारित करते है वह है उनके द्वारा प्राप्त किया जाने वाला वेतन। उनका वेतन बहुत अधिक निर्धारित किया गया है ताकि वे स्वतंत्र, कुशल एवं निष्पक्ष तरीके से कार्य कर सकें। वेतन के अलावा सभी जजों को आधिकारिक आवास भी दिया जाता है जो पूरी तरह मुफ्त होता है। संविधान में यह भी प्रावधान किया गया है कि जजों की तनख्वाह बदली नहीं जायेगी, सिर्फ वित्तीय आपातकाल स्थिति में ही उनका वेतन बदला जा सकता है। जजों का वेतन भत्ते एवं अन्य सुविधाऐं भारत की संचित निधी से दिये जाते हैं।

9.3.4 उन्मुक्तियाँ (अधिकार)

राजनीतिक विवादों से बचने के लिए संविधान ने जजों को कुछ विशेष अधिकार (उन्मुक्तियाँ) दिये हैं ताकि उन्हें आलोचनाओं से एवं अपने आधिकारिक कार्यों की खामियों से बचाया जा सके। न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि वह ऐसे व्यक्ति के खिलाफ अवमानना की कार्यवाही कर सकता है जो जजों के आधिकारिक कार्यों में बाधा उत्पन्न्न करता है। यहाँ तक कि संसद में भी जजों के बर्ताव पर कोई चर्चा नहीं हो सकती सिवाय उनको पद से हटाने वाले प्रस्ताव को छोड़कर।

अभ्यास के प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए क्या–क्या योग्यताऐं होनी चाहिए?

....

....

....

....

....

2) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने की प्रक्रिया क्या है?

....

....

....

....

....

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

9.4 सर्वोच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार

संविधान के अनुच्छेद 141 के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि उसके बनाये कानून भारत में सभी न्यायालयों पर लागू होंगे। सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार को चार वर्गों में विभाजित किया गया है। (1) प्रारंभिक क्षेत्राधिकार, (2) अपीलीय क्षेत्राधिकार (3) परामर्शवादी क्षेत्राधिकार तथा (4) पुनरावलोकन संबंधी क्षेत्राधिकार।

9.4.1 प्रारंभिक क्षेत्राधिकार

सर्वोच्च न्यायालय को प्रारंभिक क्षेत्राधिकार की शक्ति पूर्व में संघीय न्यायालय से प्राप्त हुई है। संघीय व्यवस्था में विशेषकर भारत में केन्द्र एवं राज्य सरकारें संविधान से शक्तियाँ अर्जित करती है। केन्द्र एवं राज्यों के मध्य शक्तियों के विभाजन के विवाद को केवल स्वतंत्र न्यायपालिका ही हल निकाल सकती है। अनुच्छेद 131 के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय को विशेष अधिकार दिये गये है। यह विभिन्न राज्यों के मध्य या केन्द्र एवं राज्यों के मध्य विवादों का निपटारा करती है। जब हम सर्वोच्च न्यायालय के विशेष अधिकार की

बात करते हैं तो इसका मतलब है भारत में अन्य किसी न्यायालय के पास ऐसे अधिकार नहीं है। इसी तरह सर्वोच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार का मतलब है कि सभी विवादित पक्ष संघ की इकाई है। आस्ट्रेलिया एवं संयुक्त राज्य अमेरिका की भांति भारत के सर्वोच्च न्यायालय को विभिन्न राज्यों के निवासियों के बीच विवादों को हल करने का प्रारंभिक अधिकार नहीं है।

सर्वोच्च न्यायालय के पास मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए भी विशेष अधिकार प्राप्त है। संविधान के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत हर नागरिक को यह अधिकार है कि वह अध्याय 3 में दिये गये अधिकारों का प्रवर्तन कराने के लिए समुचित कार्रवाई द्वारा उच्चतम न्यायालय का द्वार खटखटा सके। उच्चतम न्यायालय अपनी आरंभिक अधिकारिता में याचिका की सुनवाई कर सकता है। उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति दी गयी है वह प्रदत्त अधिकारों में से किसी को प्रवर्तित कराने के लिये, ऐसे निर्देश या आदेश या रिट जिनके अंतर्गत बन्दी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार–पृच्छा और उत्प्रेषण रिट हैं जो भी समुचित हो, जारी कर सके। कोर्ट ऐसे मामलों में व्यक्ति को छोड़ सकता है यदि उसे ऐसा लगे कि यह गैर कानूनी है। अधिकार पृच्छा वाली याचिका पर कोर्ट यह आदेश दे सकता है कि जन अधिकारियों को अपनी कानूनी जिम्मेदारी ठीक से निभानी चाहिये। प्रतिषेध या निषेध वह याचिका है जिसके द्वारा कोर्ट किसी ट्रिबूनल या प्राधीकरण के कामों को रोक सकता है। परमादेश वह याचिका है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को अपने पद से हटने का आदेश दे सकता है। इन याचिकाओं के अलावा सर्वोच्च न्यायालय कार्यपालिका को समुचित निर्देश एवं आदेश भी दे सकता है।

9.4.2 अपीलीय क्षेत्राधिकार

भारत में सर्वोच्च न्यायालय सभी न्यायालयों में सबसे बड़ा अपीलीय न्यायालय है। इसे सभी संवैधानिक मामलों में अपीलीय अधिकार प्राप्त है। इसके अलावा सभी सिविल, आपराधिक, संपत्ति मामले, मृत्यु दंड तथा अन्य विशेष मामलों में अपीलीय अधिकार प्राप्त है। अनुच्छेद 132 में यह प्रावधान दिया गया है कि सर्वोच्च न्यायालय में वे सभी केस जो कि उच्च न्यायालय में विचाराधीन है उस पर अपील कर सकते हैं। यदि ऐसे केस जो कि संविधान की व्याख्या से संबंधित हो वे भी मामले अपीलीय अधिकार में आते हैं। यह अपील उच्च न्यायालय पर निर्भर है यदि वह यह प्रमाणित करता है कि उक्त अपील वांक्षनीय है, यदि नहीं तो फिर सर्वोच्च न्यायालय इसे विशेष लीव अपील प्रदान कर सकता है। अनुच्छेद 133 के अंतर्गत सभी सिविल केस की सुनवायी सर्वोच्च न्यायालय में की जायेगी, संविधान में यह प्रावधान है कि उच्च न्यायालय के अधीन सिविल कार्यवाही की अपील सर्वोच्च न्यायालय में की जाती है। उच्चतम न्यायालय की अपीलीय आधिकारीता, दीवानी, फौजदारी तथा संवैधानिक मामलों पर लागू होती है। अनुच्छेद 134 के अधीन किसी उच्च न्यायालय के निर्णय के विरूद्ध कोई अपील उच्चतम न्यायालय में की जा सकती है। यह अधिकारक्षेत्र सिर्फ तीन श्रेणी के मामलों पर लागू होता है। (क) उच्च न्यायालय ने किसी अभियुक्त को दोषमुक्ति के आदेश को पलट दिया है और उसको मृत्युदंड का आदेश दे दिया है या (ख) अपने अधिकार के अधीन किसी न्यायालय से किसी मामले के विचारण के लिये अपने पास मंगा लिया है और ऐसे विचारण में अभियुक्त को सिद्धदेष ठहराया है और उसे मृत्युदंड का आदेश दिया है। ं(ग) अनुच्छेद 134 के अधीन किसी उच्च न्यायालय के निर्णय के विरूद्ध कोई अपील उच्चतम न्यायालय में की जा सकती है, यदि उच्च न्यायालय अनुच्छेद 134 के अधीन प्रमाणित कर देता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने योग्य है। अंत में, अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय अपने विवेकानुसार भारत के राज्य क्षेत्र के किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा किसी वाद का मामले में पारित किये गये या दिये गये किसी निर्णय, डिक्री, अवधारण, दंगदेश या आदेश की अपील के लिए विशेष इजाजत दे सकेगा।

9.4.3 परामर्श की अधिकारिता

संविधान का अनुच्छेद 143 सर्वोच्च न्यायालय को परामर्श की अधिकारिता प्रदान करता है। सार्वजनिक महत्व की विधि या तथ्य के किसी ऐसे प्रश्न पर उच्चतम न्यायालय की राय राष्ट्रपति माँग सकता है जिसके बारे में उसका विचार हो कि ऐसी राय प्राप्त करना है। परामर्शवादी भूमिका सर्वोच्च न्यायालय की साधारण भूमिका से अलग है। इसके तीन प्रमुख कारण है। (1) यदि दो पक्षों में कोई मुकदमा न हो, (2) परामर्शीय राय सरकार पर बाध्य नहीं होगी, तथा (3) कोर्ट का यह निर्णय लागू न माना जाये। सर्वोच्च न्यायालय की परामर्श तभी तक मान्य है जब तक कि किसी महत्वपूर्ण मसलों पर उसकी राय नहीं माँगी गयी हो। इसी प्रकार यह सरकार के लिए भी एक अच्छा विकल्प होता है किसी राजनीतिक मुद्दों को हल करने के लिए।

9.4.4 न्यायिक पुनरावलोकन (समीक्षा) का अधिकार

सर्वोच्च न्यायालय को किसी भी निर्णय को समीक्षा करने का अधिकार प्राप्त है। सर्वोच्च न्यायालय अमेरिका के न्यायालय से अधिक शक्तिशाली है। अमेरिका में सर्वोच्च न्यायालय केवल उन मामलों की सुनवाई करता है जो कि संघ से संबंधित किसी कानून अथवा संघ से इसका तात्पर्य यह है कि सर्वोच्च न्यायालय अपने किसी भी निर्णय आदेश की समीक्षा कर सकता है। जबकि भारत में सर्वोच्च न्यायालय न केवल संविधान की व्याख्या करता है बल्कि वह दीवानी एवं फौजदारी जैसे मामलों में भी सुनवाई करता है। यह किसी सीमा की बाध्यता के बिना ऐसे मामलों को अपने पास रख सकता है जो भारत में किसी अधिकरण के पास आया हो। परामर्शवादी अधिकारिता भी भारतीय सर्वोच्च न्यायालय को शक्तिशाली बनाता है जो कि अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय में नहीं है। इन शक्तियों के बावजूद भारतीय सर्वोच्च न्यायालय हमारे संविधान से निर्मित है तथा वह पूर्ण रूप से निर्भर है। केन्द्रिय विधायिका संविधान में संशोधन करके इन पर अंकुश लग सकती है। इसके अतिरिक्त, इन सभी शक्तियों को निलंबित भी किया जा सकता है यदि देश में आपातकाल की घोषणा हो गयी हो।

9.5 उच्च न्यायालय

संविधान में उच्च न्यायालय का भी प्रावधान किया गया है जो कि राज्य का सर्वोच्च न्यायालय होता है। संविधान के भाग छः के अध्याय 5 में अनुच्छेद 214 से 231 तक उच्च न्यायालय के संगठन एवं कार्यों के प्रावधान दिये गये हैं। संविधान के अनुच्छेद 125 में यह कहा गया है कि प्रत्येक राज्य का एक उच्च न्यायालय होगा। इन न्यायालयों को भी संवैधानिक दर्जा प्राप्त होता है। संसद को यह अधिकार है कि वह दो या इससे अधिक राज्यों का एक सामूहिक उच्च न्यायालय गठित कर सकती है। उदाहरण के लिये पंजाब और हरियाणा का एक ही उच्च न्यायालय है। इसी तरह, असम, नागालैण्ड, मीजोरम और अरुणाचंल प्रदेश का भी एक ही उच्च न्यायालय है।

संघ शासित प्रदेशों में संसद किसी उच्च न्यायालय को इसके अधीन कर सकती है या फिर अलग से एक नया उच्च न्यायालय सृजित कर सकती है। दिल्ली जो कि एक केन्द्र शासित प्रदेश था उसका अपना एक उच्च न्यायालय है जबकि मद्रास उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में पांडिचेरी है, केरला, उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में लक्षद्वीप है, मुंबई उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में दादरा एवं नागर हवेली, कोलकाता उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में अंडमान और निकोबार द्वीप समूह तथा पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायाालय के अधिकार क्षेत्र में चंडीगढ़ आता है।

9.5.1 उच्च न्यायालय की रचना या ढ़ाँचा

सर्वोच्च न्यायालय से भिन्न, उच्च न्यायालय के न्यायधीशों की कोई न्यूनतम संख्या नहीं होती है। राष्ट्रपति समय–समय पर उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या निर्धारित करते हैं। उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं। राष्ट्रपति इसके लिए भारत के मुख्य न्यायाधीश एवं राज्यों के राज्यपाल से सलाह लेते है। न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए राष्ट्रपति मुख्य न्यायाधीश की सलाह लेते हैं। संविधान में अतिरिक्त न्यायाधीशों की नियुक्ति का भी प्रावधान किया गया है। लेकिन ये नियुक्तियाँ अस्थायी होती है जो कि दो वर्ष से अधिक नहीं होती है। कोलेजियम व्यवस्था के अंतर्गत भी न्यायाधीशों की नियुक्ति का प्रावधान है। इसमें शीर्ष न्यायालय के वरिष्ठ जज नामों की सिफारिश करता है।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का कार्यकाल 62 वर्ष तक होता है। वह अपना स्तीफा देकर पद से हट सकता है। राष्ट्रपति किसी भी जज को दुराचार के आरोप में अपने पद से हटा सकता है। यह प्रक्रिया सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के समान है।

9.5.2 अधिकार क्षेत्र

उच्च न्यायालय का प्रारंभिक क्षेत्राधिकार मौलिक अधिकारों को लागू करना, केन्द्र एवं विधान सभा के चुनाव से संबंधित विवादों का निपटारा करना, तथा राजस्व मामले भी शामिल है। अपीलीय क्षेत्राधिकार दीवानी एवं फौजदारी दोनों मामलों में होता है। दीवानी मामलो में उच्च न्यायालय या तो प्रथम अपील कोर्ट है या दूसरा। जबकि फौजदारी मामलों में उच्च न्यायालय किसी विशेष केस की सुनवायी करता है। इन दोनों के अतिरिक्त उच्च न्यायालय को चार अन्य शक्तियाँ भी प्राप्त है :

1) मौलिक अधिकारों को लागू करने के लिए याचिका दायर करने की शक्ति होती है। यह अधिकार सर्वोच्च न्यायालय से भी बड़ा है। यदि मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है तो वह याचिका दायर कर सकता है।

2) सभी न्यायाधिकरणों के कार्यों का निरीक्षण करना विशेषकर सशस्त्र सेना से संबंधित कार्यों को छोड़कर। यह समय–समय पर नियम एवं कानून बना सकता है तथा कुछ दिशा निर्देश भी जारी करता है ताकि न्यायालय के कार्यों को प्रभावशाली बनाया जा सके।

3) संविधान की व्याख्या से संबंधित केसों को अधीनस्थ न्यायालय से अपने पास स्थानांतरित करना।

4) उच्च न्यायालय के अधिकारियों एवं नौकरों को नियुक्त करने का भी अधिकार है।

कुछ मामलों में उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र प्रतिबंधित है। जैसे, इसे उन मामलों में कोई अधिकार नहीं है जो केन्द्र के एक्ट के अंतर्गत आते हो, चाहे वह मौलिक अधिकार के उल्लंघन का मामला ही क्यों न हो।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) सर्वोच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार कौन–कौन से हैं? किस क्षेत्र में इसे सबसे अधिक अधिकार है?

....

....

....

....

....

....

....

9.6 अधीनस्थ न्यायालय

उच्च न्यायालय के अंतर्गत एक प्रकार की क्रमबद्धता है। इसे संविधान में भी दर्शाया गया है जिन्हें हम अधीनस्थ न्यायालय कहते हैं। क्योंकि ये न्यायालय राज्य सरकार के कानूनों द्वारा बनाये गये है इसलिए इनका नाम एवं पद अलग–अलग राज्य में अलग–अलग है। लेकिन, इनके मूल ढाँचे में एकरूपता होती है।

राज्य जिलों में विभाजित होता है। प्रत्येक जिले में एक जिला न्यायालय होता है। इन जिला न्यायालयों के अधीन लघु न्यायालय होते हैं जैसे, अतिरिक्त जिला न्यायालय, उप–न्यायालय, मुन्सिफ मजिस्ट्रेट न्यायालय, विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, इत्यादि। सबसे निचले स्तर पर पंचायत न्यायालय होते हैं। जैसे न्याय पंचायत, ग्राम पंचायत, पंचायत अदालत इत्यादि। लेकिन ये न्यायालय आपराधिक मामलों के अंतर्गत नहीं आते हैं।

जिला न्यायालय का प्रमुख कार्य है अधीनस्थ न्यायालयों की अपील को सुनना। हालांकि न्यायालय प्रारंभिक मामलों में स्वयं संज्ञान ले सकता है जैसे, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, संरक्षक अधिनियम, तथा भूमि अधिग्रहण अधिनियम इत्यादि। संविधान अधीनस्थ न्यायालयों की स्वतंत्रता को भी सुनिश्चित करता है। जिला न्यायालयों के जजों की नियुक्ति राज्यपाल करता है उच्च न्यायालय की सलाह पर। ऐसे जज के पास सात वर्षों का वकालात का अनुभव होना चाहिए या फिर उसे उच्च किसी भारतीय न्यायालय में सेवा प्रदान करने का अनुभव होना चाहिए। जिला न्यायालय के अलावा अन्य न्यायालय में नियुक्ति के लिए राज्यपाल उच्च न्यायालय या राज्य लोक सेवा आयोग से सलाह लेता है। उच्च न्यायालय इन जिला न्यायालयों पर नियंत्रण रखता है विशेषकर पद–स्थापन, पदोन्नती, छुट्टियाँ प्रदान करना इन मामलों में या राज्य न्यायिक सेवाओं से संबंधित मामलों में उच्च न्यायालय नियंत्रण रखता है।

9.7 न्यायिक पुनरावलोकन (समीक्षा)

न्यायिक पुनरावलोकन का अर्थ है किसी भी निर्णय की समीक्षा करना। न्यायिक पुनरावलोकन का उन देशों में काफी महत्व है जहाँ पर लिखित संविधान है, क्योंकि उन देशों में सीमित सरकार की अवधारणा लागू होती है। न्यायिक पुनरावलोकन इस अर्थ में माना जाता है कि इससे किसी विधायिका की शक्तियों की मान्यता कहाँ तक उचित है तथा सरकार के कार्यों की वैधता कहाँ तक है। विशेषकर संविधान के प्रावधानों के अनुरूप सरकार के कार्य संपन्न हो रहे हैं या नहीं इन सब कारणों के लिए न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्तियाँ दी गयी है।

इंगलैण्ड में लिखित संविधान नहीं है। यहाँ पर संसद ही सर्वोच्च सत्ता है। यहाँ पर न्यायालय को संसद के द्वारा पारित कानूनों की समीक्षा करने का अधिकार नहीं है। हालांकि इंग्लैण्ड में कोर्ट को कार्यपालिका के कार्यों की वैधता की समीक्षा कर सकती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में न्यायापालिका को कार्यपालिका कार्यों की समीक्षा का अधिकार दिया गया है। यह सभी कार्यों की समीक्षा करता है कि पूरी प्रक्रिया अपनायी गयी या नहीं।

भारत में, यदि कोई कार्य संविधान के मुताबिक नहीं है तो न्यायालय उसे अवैध घोषित कर सकता है। संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार एवं संवैधानिक उपचारों का अधिकार इसी संदर्भ में है।

सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक समीक्षा का अधिकार संविधान एवं अन्य विधायी कार्यों तक लागू होता है। हालांकि न्यायिक पुनरावलोकन संविधान संशोधन में विवादास्पद होता है। क्योंकि संविधान में अनुच्छेद 368 के अनुसार, संविधान में संशोधन की शक्ति केवल संसद द्वारा ही दी जा सकती है। हालांकि अनुच्छेद 13 में यह भी कहा गया है कि संसद ऐसा कोई कानून नहीं बना सकती जिससे कि मौलिक अधिकारों पर असर पड़े। इससे यह साबित होता है कि संविधान में क्या वाकई कोई संशोधन किया जा सकता है ? क्या ऐसा कोई संशोधन जो मौलिक अधिकारों से संबंधित हो वह असंवैधानिक माना जायेगा? यह विवाद भारत की आजादी के दो दशक तक चलता रहा था।

प्रारंभ में, न्यायालय ने संविधान संशोधन को कानून नहीं माना था क्योंकि, यह अनुच्छेद 13 के अनुरूप नहीं था। लेकिन 1967 में, गोलकनाथ केस के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि संविधान संशोधन भी एक कानून है यदि वह मौलिक अधिकारों का उल्लंघन न करे, यदि ऐसा करे तो वह असंवैधानिक माना जायेगा। पहले के सभी संशोधन जो संपत्ति के मौलिक अधिकार से संबंधित थे सभी असंवैधानिक घोषित किये गये। यदि कोई कानून लंबे समय तक मान्य रहे तो यह वैध माना जाता है क्योंकि इसका असर समाज पर पड़ता है। यदि पुराने सभी संशोधन वैध माने जाते हैं तो उन सबको लागू किया जाता है। लेकिन इससे राजनीतिक एंव आर्थिक उथल–पुथल की संभावना बनी रहती है। लेकिन ऐसी स्थिति से निपटने के लिए पुराने सभी कानूनों को सही माना गया। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि भविष्य में जो भी संशोधन हो यदि मौलिक अधिकारों के विरूद्ध हो तो वे मान्य नहीं होंगे। न्यायालय ने यह भी माना कि अनुच्छेद 368 को संविधान को पूरी तरह से संशोधन का अधिकार नहीं है बल्कि यह मात्र संशोधन की एक प्रक्रिया है। इस व्याख्या ने भी मुश्किल पैदा कर दी। यदि किसी प्रावधान को संशोधन करने की जरूरत हो तो, यह मुश्किल होगा क्योंकि इससे मौलिक अधिकारों पर प्रभाव पड़ सकता है।

1970 में, जब सर्वोच्च न्यायालय ने इंदिरा गाँधी के लोक–लुभावन वादों को विफल किया, जैसा कि प्रीवी पर्स का खात्मा, तथा बैंकों का राष्ट्रीयकरण, तब प्रधानमंत्री ने संसद की सर्वोच्चता को प्रमुख माना। 1971 में उन्हें दो तिहाई बहुमत प्राप्त हुआ तब उसने इसे सही माना था। 1972 में, संसद ने 25 वाँ संविधान संशोधन पारित किया जिसमें विधायिका को यह अनुमति दी कि वह मौलिक अधिकारों पर भी अतिक्रमण कर सकती है। यदि यह राज्य के नीति–निर्देशक सिद्धांतों को प्रभावित करें। कोई भी न्यायालय ऐसे प्रश्नों की अनुमति नहीं दे सकता। 28 वें संशोधन के अंतर्गत भारतीय राज्यों के पूर्व शासक जिनको विशेष सुविधा प्राप्त थी उनके प्रीवी पर्स को खत्म कर दिया गया था।

इन संशोधनों को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गयी थी। 1973 में यह केशवानंद भारती केस के नाम से प्रचलित हुआ था। इसे मौलिक अधिकारों से संबंधित केस भी माना जाता है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि संसद मौलिक अधिकारों में भी संशोधन कर सकती है लेकिन यह संविधान के मूल ढाँचे में परिवर्तन नहीं कर सकती है। ''मूल ढाँचे'' के अंतर्गत, संविधान संशोधन तभी तक मान्य होगा जब तक कि यह 'मूल ढाँचे' को प्रभावित नहीं करे। 'मूल ढाँचे में परिवर्तन' का सिद्धांत ही सर्वोच्च न्यायालय की वास्तविक न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति मानी जाती है।

इस सिद्धांत के बाद संविधान में संशोधन करते वक्त काफी सावधानी बरती गयी थी। किसी व्यक्ति के संसद में चुने जाने को भी चुनौती दी गयी थी जो कि प्रधानमंत्री का पद

ग्रहण करता हो। 39 वें संशोधन ने एक अलग प्रक्रिया का प्रावधान किया। ऐसे किसी भी मसले को संसद की विशेष समिति के अंतर्गत चुनौती दी जा सकती है, लेकिन यह वैद्य माना तभी जायेगा जब इस पर कोई प्रश्न नहीं पूछेगा। सर्वोच्च न्यायालय इस संशोधन को अवैद्य माना क्योंकि यह संविधान के मूल ढाँचे के विपरीत था। कोर्ट ने यह दलील दी कि मुक्त और निष्पक्ष चुनाव लोकतंत्र का अहम भाग है। चुनाव का सही परीक्षण किये बिना किसी व्यक्ति को सही मान लेना, ठीक नहीं है, यह संविधान के मूल लोकतांत्रिक आदर्शों के खिलाफ है। बाद के एक और मामले में जिसे हम मिनरवा मिल केस के नाम से जानते हैं, सर्वोच्च न्यायालय एक कदम आगे बढ़ा। 1976 के 42 वें संविधान संशोधन के तहत् अनुच्छेद 368 में एक भाग जोड़ा गया जिसमें संविधान संशोधन को न्यायिक पुनरावलोकन से दूर रखा गया। कोर्ट ने यह माना कि यह न्यायिक पुनरावलोकन के सिद्धांत के विपरीत है जो कि संविधान की प्रमुख विशेषता है।

1970 से न्यायपालिका ने मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए बड़ी भूमिका निभाई है। यह मुख्य रूप से न्यायिक सक्रियता के रूप में जाना जाता है। सर्वोच्च न्यायाललय ने वंचित वर्गों के अधिकारों की रक्षा के लिए कदम उठाये जो कि गरीबी, सामाजिक भेदभाव तथा जागरूकता की कमी के कारण अपने अधिकारों की माँग के लिए कोर्ट तक पहुँच नहीं पाते है। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने ''सुने जाने के अधिकार'' वाले सिद्धांत को कम किया जो कि कोर्ट को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति को सीमित करता है। ''सुने जाने के अधिकार'' के सिद्धांत के माध्यम से कोई भी व्यक्ति कोर्ट तक जा सकता है यदि उसे किसी प्रशासनिक कार्यवाही से ऐसा लगे कि उसे अपने अधिकार देने से इनकार किया जा रहा हो। 1979 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह सुनने का निर्णय लिया कि ऐसे किसी भी केस में वह पीड़ित व्यक्ति की बजाय उसके पक्ष में अन्य व्यक्ति को सुनेगा जो कि इस केस में जनहित में लाया जाता है।

1982 में, सर्वोच्च न्यायालय ने एक फैसला सुनाया जो निर्माण मजदूरों के अधिकारों से संबंधित था जिसमें उसने लोगों को अपने जनतांत्रिक अधिकार प्रदान किये। इसे हम जनहित याचिका का अधिकार भी कहते हैं। अमेरिका के कोर्ट का उदाहरण देते हुए भारतीय न्यायालय ने भी किसी भी व्यक्ति को जनहित में कोर्ट में जाने का अधिकार है। वह व्यक्ति एक पत्र के माध्यम से भी कोर्ट जा सकता है। इसने सभी व्यक्तियों को अपने पास आने का अधिकार दिया जनहित के मुद्दों के लिए। अब बड़ी संख्या में कोर्ट में ऐसे केस आ रहे है जिसमें लोगों के अधिकार के अलावा, गरीबों के जीवन–यापन में सुधार तथा पर्यावरण सुरक्षा जैसे मुद्दे भी शामिल होते हैं। इस कारण अब न्यायालय ने गरीबों एवं वंचितों के अधिकारों की रक्षा करने के लिए कुछ उपाय किये है।

1990 में, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग, महिला आयोग, पिछड़ा वर्ग आयोग तथा अनुसूचित जाति एवं जन जाति आयोग की स्थापना की गयी ताकि दलितों, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों एवं महिलाओं के अधिकारों की रक्षा की जा सके। इसके अलावा सन् 2000 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का भी गठन किया गया ताकि मौलिक अधिकारों की रक्षा की जा सके। इस आयोग ने पीड़ित व्यक्तियों के मानव अधिकारों के उल्लंघन पर जाँच करने तथा उसे न्याय दिलाने की बात कही। हालांकि इसके पास सजा दिलाने की शक्ति नहीं है लेकिन यह मानव अधिकार के उल्लंघन के खिलाफ़ सरकार को अपनी सिफ़ारिश दे सकता है।

जनहित याचिका के अधिकार को प्रदान करने के पश्चात् कुछ लोगों ने इसे जनतांत्रिक अधिकारों की रक्षा का सबसे बड़ा उपाय माना, और यह अधिकार संसद ने नहीं बल्कि न्यायालय ने दिया है। अब कोर्ट के पास ढेरों जनहित याचिकाएें आ रही है। इससे यह पता चलता है कि लोगों को अपने अधिकारों से वंचित किया जा रहा है। लेकिन इससे कोर्ट भी दबाव में है तथा उसके ऊपर और अधिक भाड़ आता जा रहा है।

9.8 न्यायिक सुधार

न्यायपालिका ने नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए सम्मान अर्जित किया है, लेकिन बड़ी संख्या में केस अभी लटके पड़े हैं इसने न्यायपालिका की प्रतीष्ठा में आँच लगाई तथा यह इसकी सबसे बड़ी कमजोरी भी है। 2010 में अखिल भारतीय न्यायिक सुधार कार्यशाला में मुख्य न्यायाधीश एस. एच. कपाड़िया ने यह इंगित किया कि देश मे करीब एक करोड़ केस पिछले एक साल से अधूरे पड़े हैं। इसका प्रमुख कारण है न्यायपालिका के ढ़ाँचे एवं प्रक्रिया में कहीं कुछ दोष या कमी है। कुछ कारण ऐसे भी हैं जो कि न्यायपालिका के अंदर शक्तियों का दुरूपयोग कर रहे हैं। इससे केस और लंबित होते हैं तथा न्याय दिलाने में भी देरी होती है। न्यायपालिका की एक और कमजोरी है, वह है इसकी बोझिल प्रक्रिया व्यवस्था तथा न्याय की अनिष्ट प्रक्रिया। न्यायिक सुधार के सुझाव सामने आ रहे हैं। ताकि एक नयी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व्यवस्था कायम की जा सके एवं सामाजिक न्याय प्राप्त किया जा सके।

9.9 सारांश

जैसा कि हमने इस इकाई में देखा है भारतीय न्याय व्यवस्था ब्रिटिश काल से ही अस्तित्व में है। 1773 के रेग्यूलेटिंग एक्ट 1861 के भारतीय उच्च न्यायालय एक्ट एवं 1935 के अधिनियम को भारतीय न्याय व्यवस्था में मील का पत्थर माना जाता है। संविधान ने भारत में सर्वोच्च न्यायालय को सबसे बड़ा न्यायालय घोषित किया है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बनाये गये कानून सभी न्यायालयों पर लागू होंगे। चाहे वह उच्च न्यायालय हो या अधीनस्थ न्यायालय।

भारतीय न्यायपालिका मौलिक अधिकारों के संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण मानी जाती है, संविधान निर्माताओं ने न्यायपालिका की स्वतंत्रता निष्पक्षता एवं समीक्षा के अधिकार को सबसे बड़ा हथियार माना था। न्यायिक समीक्षा एक तकनीक एवं प्रक्रिया है जिसके माध्यम से विधायिका कार्यपालिका एवं सरकारी एजेन्सियों के कार्यों की समीक्षा की जाती है। वास्तव में ये कार्य संविधान के अनुसार है या नहीं इनकी वैद्यता की जाँच की जाती है। न्यायिक पुनरावलोकन की स्थापना इसलिए की गयी क्योंकि (1) संविधान एक कानूनी मंत्र है, (2) कानून सर्वोपरी है तथा यह संविधान अनुसार होना चाहिए। अब यह पूरी तरह स्थापित हो गया है कि भारत में न्यायिक पुनरावलोकन संविधान की मूल विशेषता या संविधान का मूल ढ़ाँचा है।

9.10 उपयोगी संदर्भ

बसु., दुर्गा दास (*1983) भारत के संविधान पर टिप्पणी*, नई दिल्ली, प्रेन्टिस हॉल।

ऑस्टर्न, ग्रेनविल (1964), *भारत का संविधान,* नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

मुखर्जी, हिरेन (1978), पोरट्रेट ऑफ पार्लियामेंट, विकास, नई दिल्ली

चौबे, सिवानी (2009), भारत के संविधान का निर्माण एवं कार्यप्रणाली, नई दिल्ली, एन.बी. टी.।

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए किसी व्यक्ति को भारत का नागरिक होना चाहिए, उसे पाँच वर्ष का उच्च न्यायालय में कार्य करने का अनुभव होना चाहिए तथा 10 वर्ष तक किसी न्यायालय में वकालत का अनुभव भी होना चाहिए।

2) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को महाभियोग की प्रक्रिया से हटाया जा सकता है। इस प्रक्रिया में संसद द्वारा एक प्रस्ताव लाया जाता है जिस पर दो–तिहाई बहुमत से सदस्य इसे पास करते हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

1) सर्वोच्च न्यायालय का प्रारंभिक क्षेत्राधिकार है उसका मौलिक अधिकारों की रक्षा करना। यह विभिन्न राज्यों के बीच विवादों की भी सुनवायी करता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

संदर्भ सूची

अब्दुल, रहीम पी (1998), राष्ट्र निर्माण के संघीय मापदंड, नई दिल्ली, फेडरल अध्ययन केन्द्र, मानक प्रकाशन।

अंबडेकर, डा. बाबासाहेब (1994), लेख और भाषण, खण्ड 13, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र, सरकार।

बक्षी, पी. एम. (1999), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बक्षी, पी. एम. (2003), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बक्षी, पी. एम. (2012), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बसु, डी. डी. (2011), भारत के संविधान का परिचय, नागपुर, लेक्सिस, नेक्सिसिस बटरपर्थ, वर्धा।

बसु, डी. डी. (1960), भारत के संविधान का परिचय, कलकत्ता, एस. सी. सरकार एण्ड संस प्राइवेट लिमिटेड।

बसु, डी. डी. (1983), भारत के संविधान पर टिप्पणी, नई दिल्ली प्रेन्टिस हॉल।

भगवान, विष्णु, विद्या भूषण, और वन्दना मोहला (1984), विश्व के संविधान : एक तुलनात्मक अध्ययन, नई दिल्ली, स्टर्लिंग पब्लिसर्स, प्रा. लि.।

चागला, एम. सी. पी. बी. मुखर्जी & अन्य (1977), संविधानिक संशोधन : एक अध्ययन, कलकत्ता रूपक प्रकाशन।

चक्रवर्ती, उमलेन्द्र किशोर (2004), पहचान की खोज : उत्तरी पूर्व भारत में आदिवासी आंदोलन, 1947–1969, कोलकता, द एशियाटिक सोसायटी।

चौबे, एस. के (1976), भारत की संविधान सभाः क्रांति की प्रेरणास्रोत, नई दिल्ली, मनोहर प्रकाशन।

चौबे, एस. के (1999), भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों की पहाड़ी राजनीति : नई दिल्ली, ओरियंट लोंगमेन।

चौबे, एस. के (2009), भारतीय संविधान का निर्माण एवं कार्यप्रणाली : नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

दास, सी. बी. (1977), भारत का राष्ट्रपति, नई दिल्ली, आर आर प्रिन्टर्स।

ग्रेनविल ऑस्टिन (2012), भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ग्रेनविल ऑस्टिन (2002), लोकतांत्रिक संविधान की कार्यप्रणाली, भारत का अनुभव, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।

जोन्नेंग आइवर सर (1969), केबिनेट सरकार, कैम्ब्रिज, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

झा, एन.एस. & पी. सी. माथुर, (1999), विकेन्द्रिकरण और स्थानीय राजनीति : नई दिल्ली प्रेस प्रकाशन।

कश्यप, सुभाष, (2011), हमारा संविधान, नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

कश्यप, सुभाष, (1995), भारत की संसद का इतिहास, खंड 2, नई दिल्ली, शिप्रा. प्रकाशन

कश्यप, सुभाष, (1997), नागरिक एवं संविधान, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली

खोसला, माधव (2012), ऑक्सफोर्ड भारत संक्षिप्त परिचयः भारतीय संविधान, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

लिटन, जी. के. रवि श्रीवास्तव (1999), असमान साथी : सत्ता संबंध, उत्तर प्रदेश के विकास एवं सत्ता का हस्तांतरण, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

मिश्रा, सलील (2001), सांप्रदायिक राजनीति का वर्णन : उत्तर प्रदेश, 1937–39, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

मुखर्जी, हिरेन (1978), संसद का चित्रण, पुर्नगठन एंव प्रतिविंब, नई दिल्ली, विकास प्रकाशन।

नारंग, एस. ए. (2000), भारतीय सरकार और राजनीति, नई दिल्ली, गीतांजली प्रकाशन

पटनायक, रघुनाथ (1996), भारत में राज्यपाल एवं राष्ट्रपति की शक्तियां, नई दिल्ली, दीप एण्ड दीप प्रकाशन।

पिन्टो, मरीना, (2000), भारत में मेटोपोलीटन सिटी शासन : नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

रमन, सुन्दर (1977), मूल अधिकार एवं 42वां संविधान संशोधन, कलकत्ता, मिनर्वा प्रकाशन, प्रा. लि.।

राव, गोविन्द, एम. निर्विकार सिंह (2005), भारत में संघवाद की राजनीतिक अर्थनीति : नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

सरकार, सुमित (1983), आधुनिक भारत,1885–1947, नई दिल्ली, मैक्मिलन।

शंकर, बी. एल. वेलटिन रोड्रिग्स (2011), भारतीय संसद : लोकतंत्र की कार्यप्रणाली, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY